



42431

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि
न लगायें।

पुस्तकालय

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या

आगत संख्या.....

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30 वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए अन्यथा 50 पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

82829

स्वाक प्रमाणीकरण ११८४-११८५



ॐ ॥

अथ अष्टाङ्गयोग, ज्ञानयोगसार व योगसिद्धांत

सार

श्री योगीराज चंपानाथ ॥

निर्मित

यह पुस्तक श्री १०८ राजा अमर सिंहजीके मन्त्री सोभारामजी
मलोगोके उपकारके लिए दिवान आलिमचन्द सुपरिन्टिण्डण्टके
अधिकार से रणवीर प्रकाश यंत्रालय में छपवाई सं० ५९ ज्यैष्ठ्यवदि

जम्बू

सूचाप

पृ०	पं०		पृ०	पं०	
१	२	मंगलाचरणम्	१४	८	योगिपार्श्वेशिष्यग.
१	५	अजपागायत्रीविधिः	१५	५	आसनगणनानमस्का.
३	७	अजपाजपफलस्तुतिः	२७	४	यमनिदमादिसाधनम्
४	१	अष्टांगयोगः	३०	१	भोजनाविधिः
६	५	मच्छिद्रादियोगिग०	३३	३	षट्कर्म
१२	७	योगिराजप्रभाववर्ण०	३४	१	धोतीकर्म
१२	१	योगीश्वरसिद्धकथास०	३५	१	वस्तिकर्म
१३	१	यमनियमगणना	३६	३	नेतीकर्म

X
 2
 2
 2
 1

पृ०	पं		पृ०	पं०	
३७	३	त्राटककर्म	५३	३	मुज्जाई
३९	१	नौलीकर्म	५४	६	सित्कारी
४०	१	पवनवस्तिः	५५	३	सितली
४१	१	ब्रह्मदातन	५६	४	भास्त्रिका
४२	१	कपालभांतीकर्म	५८	५	भ्रमरी
४३	१०	षट्कर्मसमाप्तिः	५९	७	मूर्च्छाकुंभक
४४	१	प्राणायामविधिः	६०	६	प्रलावनी
५१	७	अष्टकुंभक	६१	३	केवलकुंभक
५२	१	सूर्यभेदन	६४	६	कुंभकसमाप्तिः

पृ०	पं०		पृ०	पं०	
६५	१	प्रत्याहारः	१०५	५	जालंधरमुद्रा
७०	१	पंचतत्त्वधारणा	१०७	५	विपरीतमुद्रा
७५	१	षट्चक्रध्यानं	११०	१	वज्राली
८४	१	समाधिः	११४	१	शक्तिचा.मुद्रा
८९	४	दशमुद्राः	११७	४	साधनविध
९१	३	महाबंधः	१२२	५	अष्टसिद्धिः
९३	१	महावेधः	१२५	१	यो. सं. छेदनं
९५	३	खेचरी	१२५	७	योगेप्रमाणं
१००	१	उडियान	१२८	९	अष्टांगयोगसमाप्तिः
१०२	१	मूलबंध	इति सूचिपत्रं निधिपतिकृतम्		

82821

॥ उं श्रीगौरीशंकराभ्यां नमः ॥

अ० यो०

॥ १ ॥

अथाष्टांगयोगः श्रीयोगिराजचम्पानाथकृतोलिख्यते ॥
 उं ब्रह्मानन्दपरमसुखदं केवलज्ञानमूर्तिम् द्वंद्वातीतंग
 गनसदृशतत्त्वमस्यादिलक्ष्यम् ॥ एकं नित्यं विमलमखिलं
 सर्वसिद्धान्तभूतं भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुतं नमामि
 ॥ १ ॥ अथ अजपागायत्री ॥ अजपानामगायत्री योगि
 नां मोक्षदायिनी यस्याः संकल्पमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते
 ॥ २ ॥ हकारेण वहिर्यातिसकारेणाविशेत्पुनः । हंसहंसे

अ० यो०
॥ २ ॥

त्यमुंमंत्रंजीवोजपातिसर्वदा ॥ ३ ॥ अथावाधिः॥ प्रभात
समयसिद्धासनपर स्थितहोकर संकल्पकरे. अद्याहं
पूर्वाद्यहोरात्रचरित नासापुटनिःसृतश्वासनिःश्वासात्म
कषट्शताधिकैकविंशति सहस्रसंख्याका जपागायत्री
जपंकरिष्ये ॥ मूलाधारस्वाधिष्ठानमणिपूरानाहतवि
शुद्धाज्ञाचक्रब्रह्मरन्ध्रस्थितेभ्यः सिद्धसरस्वतीलक्ष्मी
गौरीप्राणशक्तिज्ञानशक्तिचित्तशक्तिसमेतेभ्यो गणपति
ब्रह्मविष्णुरुद्रजीवगुरुपरमात्मभ्यो यथासंख्यंषट्शतं
षट्सहस्रं षट्सहस्रं सहस्रमेकंसहस्र मेकमजपागा

अ० यो०

॥ ३ ॥

यत्रीजपंप्रत्येकं निवेदयामीति निवेद्य पुनः अद्य प्रातः
 कालमारभ्य. द्वितीयप्रातःकालपर्यन्तं नासापुटनिःसृ
 तश्वासनिःश्वासात्मकं षट्शताधिकैकविंशति सहस्र
 संख्याकमजपा गायत्रीजपमहोरात्रेणाहं करिष्ये ॥
 इति जायमानाजपा गायत्रीसंकल्पं कृत्वा स्वकृत्यमाच
 रेत् ॥ इस अजपा गायत्री के तुल्य जीव ब्रह्म का
 अभेद करणे वाला कोई मंत्र नहीं है ॥

अथ अष्टाङ्गयोग ॥

अ० यो० चौपाई ॥ ॐ प्रथम धरु गुरु को ध्याना ॥

॥ ४ ॥

अध्यात्म उर उपजे जाना ॥

हृदय कमल में हो प्रकाशा ॥

गुरु समर्थ फुरे सब आशा ॥ १ ॥

तान्तेहो शरणा गती श्री गुरु नाथ करो रुपा ॥

सकल जीवके हेत विचारो ॥

योग शास्त्र भाषा कर कहे ॥

सूर्ख मन को संशय दहो ॥ २ ॥

चौपाई ॥

जांते उपजे अति भये ज्ञाना ॥

अ० यो०

विसरे देह लगे जव ध्याना ॥

॥ ५ ॥

पवन रहित दीपक है जैसे ॥

चम्पा हृदय प्रकाशे तैसे ॥ ३ ॥

विन इन्द्रो यह भगावे भोग ॥

स्वर्ग नशीनी कहा यह योग ॥

केते सिद्ध या मारग ये ॥

हठ कर साध अमर जो भये ॥ ४ ॥

जांको नाम सुनावो सभी ॥

मन को आनन्द आवे तभी ॥

चौपाई ॥

अ.यो.

॥ ६ ॥

सुन मन तो को सिद्ध गिनावो ॥

हठ विद्या का भेद बतावो ॥ ५ ॥

राज मार्ग कहिये है ताही ॥

भ्रान्ती रूप मत दूर न वाही ॥

प्रथम श्री आदि नाथ मच्छींद्र योगी ॥

सदा अखण्ड ब्रह्म रस भोगी ॥ ६ ॥

गोरक्ष नाथ चोरं वीरू ॥

स्वात्मा राम विडारण धीरू ॥

कोरंडक सुरा नंद सिद्ध ॥

चर्पट कानेरि भालू की बुद्ध ॥ ७ ॥

अ.यो.

॥ ७ ॥

चौपाई ॥

नित्य नाथ निरंजन होई ॥

ता सम सिद्ध और न कोई ॥

कपाली विन्द नाथ सो कहिये ॥

का करि चण्ड श्वरों में लहिये ॥ ८ ॥

अल्प प्रभू दे वै सो है ॥

भोडा चोली टिडिणी ओ है ॥

सुथान वों सिद्ध बुद्धक थुडी ॥

जाकी प्रीति अलष संग जुडी ॥ ९ ॥

खण्डक पाल श्री वाल गुंदाई ॥

अजे पाल सिद्ध बुद्धी सवाई ॥

चौपाई ॥

जालन्धर पावकही त्रैसा ॥

केवल साक्षात् सदा शिव तैसा ॥ १० ॥

हाली पाव मिडकी होई ॥

संतोष नाथ सिद्ध में सोई ॥

गोपीचन्दभर्तरीराजाच्छाडेभोगयोगकेकाजा ॥

नांगाअर्जुनविरुक्पालहालीपावकप्रगटसाक्षाल

आनन्द भैरव पारस नाथ ॥

[११]

नव निधि रहे ताही के साथ ॥

नेम नाथ निरभय है रहया ॥

मनको जीत मोक्ष पद गया ॥ १२ ॥

अ० यो०

१८ ॥

अ० यो०

॥ ९ ॥

चौपाई ॥ याग विद्याके साधक येहा ॥
 जाके नाम गिनाये तेहा ॥
 एता आदि महा सिद्ध भये ॥
 योग प्रसाद अमरहै गये ॥ १३ ॥
 जाको काल मृतभय नाहीं ॥
 त्रिविध ताप पल माही न साहीं ॥
 यामार्ग बहु सिद्ध भये भाई ॥
 सवन गिनाय ग्रंथ बधजाई ॥ १४ ॥
 अजर अमर युग में है रहें ॥
 तीन कालकी वातांकहैं ॥

चौपाई ॥ इच्छा करे चलजावें ताहीं ॥
जाकौ आन अटक कहु नाहीं ॥ १५ ॥
दिव्य देह कंचन मय होई ॥
मूल मंत्र संग्रह न कोई ॥
बाल रूप सिद्ध भासे ऐसैं ॥
ब्रह्म रूप सनकादिक तैसैं ॥ १६ ॥
इच्छा रूप धरे क्षिन माहीं ॥
तनक वार लगे कहु नाहीं ॥
सकल ब्रह्माण्ड पिण्ड में देखे ॥
अपनो पिण्ड ब्रह्म मय लेखे ॥ १७ ॥

अ. यो.
॥१०॥

अ० यो०

॥ ११ ॥

चौपाई ॥ अष्ट सिद्धि आज्ञा में जाके ॥
 कछु अवलाख रहे न ताके ॥
 रंक को राव करें क्षिन माहीं ॥
 करता वेर लगे क्षिन नाहीं ॥ १८ ॥
 ये कहुं नेक कोप करावे ॥
 तोरज धानी धूड मिलावे ॥
 कर्ता हरता समर्थ सुरा ॥
 योग विद्या के साधक पूरा ॥ १९ ॥
 चम्पा तिन सिद्धान काहुं दासा ॥
 जिन जग योग शास्त्र पर काशा ॥

अ. यो.

॥१२॥

चौपाई ॥ विषय जीव पर दया विचारी ॥
ताते सिद्धां कथा उचारी ॥ २० ॥
चम्पा तिन सिधन बलिहारी ॥
जिन पापी जन पार उतारी ॥
जो यह सिद्ध कथा मन लावे ॥
सो भव छोड योग पद पावे ॥ २१ ॥

दोहा ॥ संक नमानेकालको दूरकरे यमदण्ड ॥
राज कमावे देहमें जवलगत्यह ब्रह्मण्ड ॥
इति श्रीयोगीश्वरचम्पानाथसिद्धकथा समाप्ता ॥

अथ यमनियमाः ॥

चौपाई ॥ अथ यम ॥ क्रोध त्याग क्षमा सत बोले ॥

मनको रोक चपलता खोले ॥

दान प्रणता धीर्ज संतोषे ॥

ये दश यम हैं मल को धोवें ॥ २२ ॥

अथ नेम ॥

शोच रहे विद्या तप साधे ॥

पडे पडावे इंद्रिय बांधे ॥

व्रत सत धरे साधे उप वासा ॥

गहै मौनता रहे निरासा ॥ २३ ॥

अ० यो०

॥१३॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥ १४ ॥

येम नेम इतिहास में कहे ॥ संक्षेप जानी सुमुखी गये ॥
अल्पहार में यम आ गया ॥ सारेहित नियम सो भया ॥ २४

दोहा ॥

येम नेम हैं योग में सबसाधन तत्त्वसार ॥
चम्पानाथ याहि सो पहिले लिखयो विचार ॥ २५ ॥

अथासनम् ॥

चौपाई ॥

प्रथमे जो कोई योग में आवे ॥ गुरुको जाई सीसनवावे ॥
आसन कर बना रहे ऐसे ॥ लज्जा रहित बालकहै जैसे २६ ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥ १५॥

सब देही कोमलता होई ॥ रक्त ग्रन्थी रहे नहीं कोई ॥
 तब स्थिरता आसन गहे ॥ सदा अरोग्य प्रणता रहे २७ ॥
 वसिष्ठादि मुनी जन जोई ॥ मच्छीन्द्रादि योगी जन सोई ॥
 आसनसाध सरल करदेही ॥ प्रथम अंग योग को एही २८ ॥
 चौरासी लख आसन कहे ॥ तामें सिद्धां चौरासी गहे ॥
 चौरासी मे षोडस सारा ॥ षोडसमें दो आसन निरधारा २९ ॥

ॐ नमः सिवाय गुरवेनादिव्यं दलयात्मने ॥

यह मंत्र पढ प्रणामहि करे ॥ तब योगी आरंभ चित धरे ॥

अथ स्वस्ति आसनम् ॥

अ० यो०

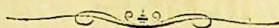
॥ १६ ॥

दाहणीपगथली वामेपगमाहीं ॥ वाइ पगथलीदाहणिपगमाहीं॥
कोमल होय सो बैठा रहे ॥ याको स्वस्तिक आसन कहे ३०॥

अथ गौमुखासनम् ॥

चौपाई ॥

वाउपाव दक्षिण अंग धरे ॥ दहणो पग वामें दिस करे ॥
गोडा ऊपर गोडो ब्यावे ॥ गौमुख आसन यह कहावे ॥ ३१ ॥



अथ वीरासनम् ॥

अ० यो०

चौपाई ॥

॥ १७ ॥

एक पांव गुदा तल करे ॥ दूजा पग धरणी पर धरे ॥

वीरासन है यांका नाम ॥ जासु जाय सके नहीं काम ॥ ३२ ॥

अथ योगासनम् ॥

चौपाई ॥

एडी ऊपर एडी करे ॥ मूल द्वारके नीचे धरे ॥

योगासन है तांकोनाम ॥ जांते जीव करे विश्राम ॥ ३३ ॥

अथ कुकुटासनम् ॥

चौपाई ॥

अ. यो.

॥ ८ ॥

पद्मासन पहले करभाई ॥ पल्या अन्तर हाथ चलाई ॥
गोडाटेक आन्धो होजावे ॥ कुकुट आसन यह कहावे ॥ ३४ ॥

अथ कूर्मासनम् ॥

चौपाई ॥

वामे जंघ पर दक्षिण पाव ॥ दहणी जंघ पर बाँड ल्याव ॥
पल्या अंस घाले हाथ ॥ करे काकसी गुदी परि बाथ ॥ ३५ ॥
तर्फीमन घेही कहावे ॥ सो सो सब इन्दी सकुचावे ॥ ३६ ॥

अथ धनुषासनम् ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥ १९ ॥

चरण अंगुठा दोउ करते समावे ॥ एक चरण श्रवण लागि ल्यावे ॥

धनुष खिंच जो बैठा रहे ॥ धनुषासन योगी तिसकहे ॥ ३७ ॥

अथ पच्छिमतानासनम् ॥

चौपाई ॥

दो पहिली पाव पसारे लांवा ॥ करसो गहेपगांकों फांवा ॥

गोडा ऊपर धरे ललाट ॥ पवन चलावे पच्छिमकी वाट ॥ ३८ ॥

चौपाई ॥

अ. यो.

॥२०॥

पछिम तान यह आसन होई ॥ नित प्रति साधे योगी कोई ॥
जठर अग्नि को प्रबल करे ॥ सकल रोग पेट के हरे ॥ ३९ ॥

अथ मयूरासनम् ॥

चौपाई ॥

उलटा हाथ पर धरणी पर धरे ॥ दोन्युं किहनी नाभि तलकरे ॥
लंवादोई पसारे पांव ॥ हाथ पर अधर हैं जांय ॥ ४० ॥
और आसन ऐसी विधि होई ॥ जीके रोग रहे न कोई ॥
अजुकी भोजन भोले खावे ॥ या आसन सों भस्म करावे ॥ ४१ ॥

अथ शवासनम् ॥

चौपाई ॥

अ. यो.

॥२१॥

हाथ पांव पसारे ऐसे ॥ मृत मग पडो रहेहि जैसे ॥

बडा आसन है यांका नाम ॥ यांसीं चित पावे विश्राम ॥४२॥

आसन करत थकेलो होई ॥ या आसन सो रहे न कोई ॥

आनन्द वस्था पावे तवही ॥ आसन हार मिटावे सबही ४३॥

अथ सिद्धासनम् ॥

चौपाई ॥

वाम एडी जोनी विच धरे ॥ दहनी ले नाभी तल करे ॥

अचल शरीर कर सूधा रहे ॥ या बैठक सिद्धा सन कहे ४४॥

चौपाई ॥

अ.यो.

॥२२॥

ठोड़ी गले लगावें ऐसे ॥ घोड़ा की गर्दन है जैसे ॥

उलटा नेत्र भ्रू मध्य करे ॥ जिह्वा उलटी ताल वे धरे ४५ ॥

गंग जमन का रोके वाट ॥ या सों खुले मुक्ति कपाट ॥

चेतन पुरुष का दर्शन होई ॥ सिद्धासन तो साधे कोई ॥ ४६

अथ पद्मासनम् ॥

चौपाई ॥

वाई जंघपर दक्षिण पाव ॥ दहणी ऊपर वाउ ल्याव ॥

दो हाथ पाछे ते रहे ॥ चरण अंगुठा कर सो गहे ॥ ४७ ॥

चौपाई ॥

डाडी हृदये लगे लगावे ॥ नासाग्र नयन रहावे ॥
 दशो दिशा कों देखें नाहीं ॥ अचल ध्यान ब्रह्मके माहीं ॥ ४८
 देही के सब नाशें रोग ॥ मन प्रसन्न विन इन्द्रिय भोग ॥
 सदा कमल प्रफुलित रहे ॥ पद्मासन याही सो कहे ॥ ४९ ॥
 पद्मासन में इस्थितयोगी ॥ इडापिंगला सुषमण भोगी ॥
 ओंकार जपे मन माहीं ॥ तासु मुक्ति में संशय नाहीं ॥ ५० ॥

अ ॥ सहासनम् ॥

चौपाई ॥

चरण पग थली जोडि मिलावे ॥ जंघा धरति जाय लगावे ॥
 पिण्डा ऊपर बैठे ॥ ५१ ॥

अ. यो.

२३॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥ २४ ॥

अंगुली कर की चोरी राखे ॥ न्यारे मुख वायु कलु हाखे ॥
फारी भुरके मध्य है गोर्दे नैन ॥ अमृतसर्वे मुखते त्रैन ५२ ॥
सिंहासन है यां को नाम ॥ योगी जनांके पूरण काम ॥
सूर्य के घर आसन करे ॥ कुंभक खैच हृदय में धरे ॥ ५३ ॥

अथ भगासनम् ॥

चौपाई ॥

दौ पग थली जोडि मिलावे ॥ ऐडी जोडी नाभी तल ल्यावे ॥
गण्डलटाय मूल तलदीजे ॥ ऐसीविधिभग आसनकीजे ५४ ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥ २५ ॥

पाछ अंगुली एडी आगे ॥ भगाकार यह आसन लागे ॥

उलटा हाथ जंघपर धरे ॥ नासाग्र दृष्टी को करे ॥ ५५ ॥

कल्याण रूप यह आसन वान्वे ॥ उलटी मूर्ति गगनको साधे ॥

निश्चल हो दृढ आसन माहीं ॥ रोग व्याधि कछु व्यापे नाहीं ५६

दोहा ॥

चम्पा यह सब आसन में एक सधे या दोय ॥

एक चित्त हो साधिये मोक्ष परं पद होय ५७ ॥



अथ स्थानभेदः ॥

अ.यो.

चौपाई ॥

॥२६॥

योग करणको मन में धारे ॥ तो योगी शुद्ध देश विचारे ॥
 शुचि पवित्र तीरथ हूं मांहिं ॥ चितहो बैठे प्रसन्न जहांई ५८॥
 धर्मराज्य सुभिक्षा देशा ॥ नही उपद्रव दुःख कलेशा ॥ [५९]
 देखि एकान्त मन कामना करहिं ॥ अल्प अहार में उदर भरहीं
 निर्मल जलको होय निवासा ॥ जहां बैठक करकरे अभ्यासा ॥
 अति ऊचा नीचा नहीं होई ॥ सम आसन कर बैठे सोई
 घनों अहार न करे ॥ चंपा अलेख मन धरे ॥ [६०]

चौपाई ॥

अ० यो०

॥ २७ ॥

घनों बोले नाहीं ॥ योगा रंम विना नेम राखे नाहीं ॥ ६१ ॥
 किसी वस्तुकी चाह ना मन्करे ॥ विषय सुखनको दूर परिहरे ॥
 जाते होमें मल रहे न कोई ॥ नीत साधे ते योगी होई ॥ ६२ ॥

अथ साधनम् ॥

चौपाई ॥

अल्प अहार मे इम आगया ॥ अहिंसा माहीं नियम सो भया ॥
 आसन माहीं सिद्ध आसन भाई ॥ मुद्रामाहीं खचरी आई ॥ ६३ ॥

चौपाई ॥

अ. यो.

॥२८॥

सब नाडी में सुषमन एक ॥ अष्ट कुंभक मे केवल एक ॥

खेचरी समान मुद्रानाहीं ॥ केवल कुंभसम कुंभक जाहीं ६४ ॥

यूलय योग में कहिये नाद ॥ धुनि में विसरे आपा वाद ॥

मंत्रयोग में एक रंकार ॥ जानों सोहं ज्ञान को सार ॥ ६५ ॥

ब्रह्म चरित व्रत को गहे ॥ निस दिन आत्मा ध्यानमें रहे ॥

मन ते इस्त्री संग मटावे ॥ ऐसे द्वादश वर्ष गवावे ॥ ६६ ॥

सिद्धासन सों बैठा रहे ॥ मन पवनां को गाढा गहे ॥

सूर्यके घर पथ भोजन करे ॥ चन्द्र सूर्य जल पीवो करे ६७

चौपाई ॥

अ० यो०

॥२९॥

योगी साधे अल्प अहरा ॥ निस दिन राखे तत्त्व विचारा ॥
 श्रवण न सुने न वके बहु भाई ॥ दुर्जन संग करे ना काई ६८
 देही मंजन करे सिंगारा ॥ जाते उपजे ज्ञान विचारा ॥
 एकाकी रहे निराशा ॥ शरीर जीत गहै विश्वासा ॥ ६९ ॥
 अति उत्साह धरे मन मांहीं ॥ आशा तृष्णा व्यापे नाहीं ॥
 योग पंथ मे निश्चा राखे ॥ धीर्य गहै कल्पना नाशे ॥ ७० ॥

अथ भोजनविधिः ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥३०॥

क्षीर घृत मधु कोमल अहारा ॥ चौथो भाग त्यागे निर्धारा ॥

सुर आवे तब भोजन लेवे ॥ अयुक्ति अहार मुख नाहीं देवे ७१

कडवो तीक्ष्ण त्यागे लूण ॥ होर साग तिल पावे कौन ॥

सरसो राई तक्र मद मच्छा ॥ वक्री आदि मांस न भच्छा ७२॥

उडद कुलथ सनाको साग ॥ हिंगु लसन कान्दाको साग ॥

उलो रूखो वासी कसैलो ॥ मोठ मसूर चनो दुःख देलो ७३॥

एते भोजन शत्रु समान ॥ हाथ न छुवे जो साधे प्राण ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥ ३१ ॥

खाटो बैलो कदे ना खावे ॥ स्त्री को संग दूर करावे ॥ ७४ ॥
 योग करे तव अग्नि नहीं तापे ॥ याके संग कल्पना व्यापे ॥
 लाडू वस्तु कदे ना खावे ॥ ताते मन विकल्प है आवे ॥ ७५ ॥
 प्रात स्नान उपवास न करे ॥ श्री गोरख वचन हृदयमें धरे ॥
 देही कलेस करे नहीं कोई ॥ योग पंथमें विघ्नन होई ॥ ७६ ॥
 यह भाषों योगीको अहारा ॥ जाते उपजे ब्रह्म विचारा ॥
 सातिक अहार सातिक उपजावे ॥ रज तमके गुणसवे मिटावे ७७
 घृतखाण्ड मधु कोमल साने ॥ गौको दूध पिवे मन माने ॥
 सुंठ पटोल परवर चोलाई ॥ हरडे पाक त्रिफला खाई ॥ ७८ ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥३२॥

चिकनोभोजन योगीखावे ॥ ताते कोडे मलन रहावे ॥ ७९ ॥
 निर्मल जल को राखे छाणी ॥ योगी दधको पीवे न पानी ॥
 सब देहीकी चिन्ता त्यागे ॥ हो अचिन्त योगमें लागे ८० ॥
 प्राणायाम करराखे श्वासा ॥ अलख मिलन की होए आशा ॥
 हठकर आलस दे छिट्काई ॥ कदो ना आवें छिक जंभाई ८१ ॥
 षट् कर्मणि कर देह पखाले ॥ रागद्वेषादिक मनते वाले ॥
 कुंभक मुद्रानाद उपासी ॥ सुख मन भोग ब्रह्म विलासी ८२ ॥
 योगाभ्यास श्रीगोरक्ष भाष्यो ॥ सो चम्पानाथ दासमन राख्यो ॥

दोहा ॥

अ० यो०

॥१३॥

यह आसन अभ्यास कर जीते सास उसास ॥

ब्रह्म रटन परतापते जीव ब्रह्म है तास ॥ ८३ ॥

अथ षट् कर्म ॥

चौपाई ॥

प्राणायाम करत रोगहोई आवे ॥ तांते प्रथम षट् कर्म करावे ॥

वात पित्त कफ उठे न कोई ॥ नित साधें तें रोग न होई ८४ ॥

सुध नाडी में पवन समावे ॥ प्राण अपान एक हो आवे ॥

सब नाडी चक्र सूधा होई ॥ मलको जाल रहे नहीं कोई ॥ ८५ ॥

अथ धोती कर्म ॥

चौपाई ॥

अ. यो.

॥३४॥

महीन वस्त्र नरम सो लीजे ॥ पन्द्रां हाथ की धोती कीजे ॥
पांच अंगुल चौडी परमान ॥ तांको निगले सक्ति अनुमान ८६
मुख सो काढ पानी सो धोवे ॥ धोती कर्म महादुखको खोवे ॥
श्वास कास कफ पिलो न होई ॥ कुष्ठरोग पित्त रहे न कोई ८७ ॥
धोती कर्म येते गुण करे ॥ हृदय के मल सबही हरे ॥
प्राणसमावे हृदये साई ॥ धोतीके गुण कहे न जाई ८८ ॥

अथ वस्ति ॥

चौपाई ॥

अ० यो० नाभि प्रमाण जलमें रहे ॥ कट आसनकी बैठक गहे ॥
 ३५ ॥ मूल चक्र सो रेंवचे पानी ॥ यागनीतो गुरु गमशे जानी ८९ ॥
 पेट पछाल जल बाहर डाले ॥ या विधि वस्ति कर्म प्रचोले ॥
 गुलम फियोदरके रोग ॥ आम मल सब दोष वियोग ९० ॥
 सकल इन्द्रिय प्रफुल्लित रहे ॥ वस्तीके गुण योगी लहे ॥
 जाठर अग्नी अधिक बधावे ॥ अपान वायु कमल में आवे ९१ ॥
 मुखकी कान्ती उज्जल भाषे ॥ वस्तिकर्म के गुण पर काशे ॥

चौपाई ॥

उज्जल नेत्र फटिक समाना ॥ हृदय कमल मे उगे महाना ॥
गैवी शब्द करे गुंजारा ॥ वस्ती के गुण अगम अपारा ९२ ॥

अथ नेती ॥

चौपाई ॥

एक सतकी डोर बनावे ॥ नासाकी सुर माहीं चलावे ॥
मुख के मार्ग काटे आन ॥ ए कर्म चम्पा नेती के जान ९३ ॥
कपाल शोधनी चाको नाम ॥ दिव्यदृष्टी कर दिखावे धाम ॥
सिरके सेवे रोग मिटावे ॥ घ्राण द्वारा दौ सरल रहावे ९४ ॥

चौपाई ॥

जांसी नेत्र निर्मल रहे ॥ नेती के गुण थोगी कहे ॥

अ० यो०

परमार्थको प्रगट करही ॥ नतकि गुण जानो सबही ९५ ॥

॥३७॥

अथ त्राटक ॥

चौपाई ॥

निश्चल दृष्टी करहि हैरा ॥ चपल नेत्र को राखो धीरा ॥

सूक्ष्म वस्तु मे राखो ध्यान ॥ जहां प्रगटे निज निरवान ९६ ॥

आशु चले नेत्रके माहीं ॥ जब लगि सुरति डिगावे नाहीं ॥

नेत्र की गरमी मिट जावे ॥ ये त्राटक कर्म कहा वे ९७ ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

यांते निद्रा आवे नाहीं ॥ संकल्प मिटे त्राटक माहीं ॥

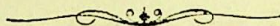
योगी त्राटक ध्यान लगावे ॥ जांते मृत्यु आये थक जावे १८॥

त्राटक कर्म को राखे ऐसे ॥ जूंकंजन उावाधे जैसे ॥

त्राटक कर्मको राखे गोई ॥ यु लपणके साया होई ॥ १९ ॥

याको योगी नीका जाने ॥ अपने मुख से नहीं वखाने ॥

नेत्रके सब नासे रोगा ॥ त्राटक कर्म करि साधे योगा ॥ १०० ॥



अथ नौली ॥

चौपाई ॥

अ. यो.

॥ ३९ ॥

औला सौला नलको फेरे ॥ जैसे गुंजरी दही घमेरे ॥

अधिक अभ्यास करे जो कोई ॥ तब दोउनल परगट होई १० १ ॥

जैसे डण्डा चाक चलावे ॥ ऐसे योगी नल घुमावे ॥

नौली के गुण ऐसे भाई ॥ पंखी की गति उपजे आई १० २ ॥

आँन्धा कमल सूधा करे ॥ नौली सकल रोगको हरे ॥

मन्द अग्निको अधिक जगावे ॥ उद कोठे मल न रहावे १० ३ ॥

सकल नाडी को शुद्ध कराहीं ॥ पवन प्रवेश करे सब माहीं ॥

हठ कर या नौली को जानो ॥ जाते योग पंथ नहीं च्छानो १० ४ ॥

अ० यो०

॥४०॥

अथ पवन वस्ति

चौपाई ॥

पहली जलसे वस्ति करही ॥ पाछे पवन पेट में भरही ॥

पद्मा सन कर रोके वायु ॥ पवन वस्ति एसे कर भायु १०५ ॥

जब लग पवन उदर में रहे ॥ तब लो क्षुधा तृखा नहीं दहे ॥

अन्न जल विन राखे देही ॥ पवन वस्ती गुण जानो येही १०६

ओं ह्रीं कारे नमः ॥

मूल कमल प्रफुल्लित रहे ॥ उलटी गंग पश्चिम को बहे ॥

पवन वस्तिको साधे योग ॥ विना देही भगावे भोग ॥ १०७ ॥

अ० यो०

अथ ब्रह्म दातन ॥

चौपाई ॥

॥४१॥

सवा हाथ की दातन लोजे ॥ कूचि कर मुख मार्गमें दीजे ॥
 नाभी लग चलावत सोई ॥ सने सने जो दुःख न होई १०८ ॥
 कफकी जाली दूर करावे ॥ सुती नागनो जाय जगावे ॥
 सर्पनी छोडे ब्रह्म द्वारा ॥ याते उठे शब्द अपारा ॥ १०९ ॥
 ओंकार धुनि परगट होई ॥ नख शिख तन में व्यापे सोई ॥
 ब्रह्म दातन हे याको नाम ॥ योगी साध लहै सुख धाम ११० ॥



अथ कपाल भ्राती कर्म ॥

अ.बो.

चौपाई ॥

॥४२॥

पद्मासन की बैठक गहे ॥ समशरीर कर गाढा रहे ॥
मनसों जपे हंसका जाप ॥ तब ना रहें योगी के पाप १११॥
जैसे लोहार धमन धमावे ॥ ऐसे योगी पवन चलावे ॥
रेचक पूरक ऐसे करे ॥ कपाल भ्राती कफ दोषही हरे ११२॥
यह षट् कर्म सिद्धि के दाता ॥ इनसे सूक्ष्म होवे गाता ॥
आम पित्त कफ रहे न कोई ॥ नख सिख वपु निर्मलहोई ११३॥
षट् कर्म करे मलका नासा ॥ शुद्ध घडी पक्ष करे अयासा ॥
जब लग पवन देह में रहे ॥ तब लग जीवत सबकोकहे ११४॥

श्र. यो.

॥४३॥

पवन गये ते मृतकहोई ॥ या भेद जाने सब कोई ॥
 ताकाल भये ते ब्रह्माण्डरे ॥ तांते प्राणायाम नित करे ॥ ११५ ॥
 महा योगि जन जेते भये ॥ प्राणा याम करते मुक्त भये ॥
 महामुनीश्वर जगमें जेही ॥ तिनप्राणायाम करिराखीदेही ११६
 मन पवना गहि छाडे कर्म ॥ योगी श्वर के येही धर्म ॥
 विना खेद मुक्तिको जावे ॥ भव सागर मे पाजवतावे ॥ ११७ ॥

दोहा ॥

यह षट् कर्म वह करे । याके कफ पित्त वात ॥

चम्पा नाथ समाधि मे सदा गहे विश्वास ॥

इति षट् कर्माणि ॥

अथ प्राणायामाः ॥

चौपाई ॥

अ. यो.

॥४४॥

अव भाखूं प्राणायाम को युद्ध ॥ यांते होवे आत्मा शुद्ध ॥
 इन्द्रिय जीत मन वस करे ॥ ऐसा युद्ध श्री गोरख कहे ॥ ११८
 पहले तनकी छाडे आसा ॥ निस दिन राखे अलख उपासा ॥
 भोग उदास योग में रहे ॥ चम्पा सकल वासना दहे ११९ ॥
 पद्मासन कर मनको खेबे ॥ अपान वायू उपरको लेवे ॥
 ठोड़ी राखे गले लगाय ॥ रेचक पूरक करे अधाय ॥ १२० ॥
 सूधा राखे सकल शरीर ॥ लम्बिका पीवे निमल नोर ॥
 नासाग्र्य दृष्टि निहारे ॥ दौ हाथ गोडा में धारे ॥ १२१ ॥

अ० यो०

॥ ४५ ॥

चन्द्र चले तब करे अभ्यासा ॥ अमृत सरवे तन में खासा ॥
 ओं कार मूरत सो जपे ॥ जाको पाप कदे ना लीपे ॥ १२२ ॥
 शुचि अशुचिको भ्रम नहीं कीजे ॥ ज्युवन आवे तंजुजप लीजे ॥
 तापुरुषको लगे नहीं पाप ॥ जैसे कमल पत्र बत आप १२३
 ईडा के घर पूरक आने ॥ कुम्भक करे जेतो मन माने ॥
 रेचक करे पिंगला आई ॥ तहां चन्द्र को ध्यानलगाई १२४ ॥
 अमृत हंस ब्रह्माड को खीर ॥ ऐसो ध्यान घरे सो धीर ॥
 चन्द्र मण्डलको ऐसाध्यावे ॥ यह प्राणायाम महासुखपावे १२५
 चन्द्र से फेरि पूरक कर भाई ॥ कुम्भक राखे सहज सुहाई ॥

अ. यो.

॥४६॥

रेचक करे इडा सो आन ॥ जहां ध्यान सूर्य को जान १२६
 महाप्रलय को अग्नि समान ॥ नाभी मण्डल ध्यावे ध्यान ॥
 चन्द्रसूर्य ऐसीविधि ध्यावे ॥ विना खेद आनन्द उपजावे १२७
 ईडा सो कर पूरे प्राण ॥ हृदये कुम्भक राखे स्यान ॥
 रेचक करे पिंगला माहीं ॥ ताकोकाम सतावे नाहीं ॥ १२८ ॥
 ऐसो प्राणायाम नीका गहे ॥ परमानन्द योगी लहे ॥
 चन्द्र सूर अभ्यासे ऐसे ॥ इडा पिंगला चलावे तैसे ॥ १२९ ॥
 चन्द्र के घर पूरक करे ॥ सने सने उदरमे भरे ॥
 कुम्भक राखे शक्ति समाना ॥ पिंगला नाडी रेचेप्राणा १३० ॥

अ० यो०

॥४७॥

सूर्य के पुर कुम्भक धारे ॥ चंदरके घर पवन न कारे ॥
 फेरिचन्द्रसो पीवे प्राण ॥ कुम्भक राख नहींदे जान ॥ १३१ ॥
 सने सने जव रेचे भाई ॥ सूर्यके धर निकसे आई ॥
 इडा पिंगला पवन पुरावे ॥ रविशशिदोनो एक मिलावे १३२ ॥
 चन्द्र धरे सूर्यके मांहीं ॥ सूर समावे चन्द्र है जाई ॥
 उलटी पलटी विप्र ये करे ॥ या प्राणायाम पापहि हरे १३३ ॥
 ओत पोत कर पवन पुरावे ॥ रवि शशि नाडी सरल रहावे ॥
 अल्प अहार ले संयम रहे ॥ तीन मास में सुधिता लहे १३४ ॥
 अपान पान एक है जावे ॥ ब्रह्म नाडी में पवन समावे ॥

अ० यो०

॥४८॥

चार वानीकरे अभ्यासा ॥ प्रात मध्यान्ह सन्ध्या अधनीसा १३५
 चम्पा कुम्भ करे ये भान्ती ॥ योगी रमे सुषुम्णा राती ॥
 बीस बीस आसे वा को ॥ इक वार को लेखा भाखो १३६ ॥
 चारि वारमें आसी प्रयन्त ॥ यह प्राणायाम काया सुद्धन्त ॥
 प्राणायाम है तीन प्रकारा ॥ कनिष्ठ मध्यम उत्तम सारा १३७ ॥
 कनिष्ठ तो पसेव चलावे ॥ मध्यम में कम्प उप जावे ॥
 उत्तम में शिव प्रात होई ॥ त्रिविध प्राणायाम साधे कोई १३८ ॥
 प्राणायाम है उत्तम सार ॥ चम्पा नाथ कहे बीचार ॥
 भ्रमर गुफा का द्वारा खुले ॥ तब योगी का आसन हले १३९

बिना आधार आपसे रहे ॥ जब लग यम को नीका गहे ॥

अ० यो०

युक्ति युक्ति से सेके वाय ॥ बिना युक्ति सेग है जाय ॥ १४० ॥

॥४९॥

युक्ती युक्ती साधन करे ॥ बिना युक्ती प्राणको हरे ॥ १४१ ॥

युक्ति करे तो सोसे आवे ॥ बिना युक्ति साधकको खावे ॥ १४२ ॥

श्वास कास वेदन को मूल ॥ हिर कर्ना आंखों को सूल ॥ १४३ ॥

तानते साधक युक्ति विचारे ॥ योग पंथके विघ्न निवारे ॥ १४४ ॥

द्वादशमात्रा पूरक मानो ॥ दशमात्रा रेंचक कर जानो ॥ १४५ ॥

अ० यो०

कनिष्ठ प्राणायाम यह सातो ॥ प्राणायाम योग में जानो ॥ १४६ ॥

अ० यो०

विंशती मात्रा मध्यम कहे ॥ त्रिगुणी मात्रा उत्तम गहे ॥ १४७ ॥

कनिष्ठ प्रणायाम वास करे ॥ बाहर भीतर पातक हरे ॥ १४८ ॥

अ.शो.

५०॥

पूरक कुम्भक रेचक येहे ॥ ओंकार याही सो कहे ॥

एक मेक यह तीन प्रकारा ॥ याकौ कोई न पावे पारा ॥ १४५ ॥

परमात्माहै याके माहीं ॥ गुरु गम बिना उपावे नाहीं ॥

प्राणायाम करे दिन रात ॥ तनमें रहे न पाप की जात ॥ १४६ ॥

पातक रूपी इन्धन होई ॥ प्राणायाम अग्नि रहे न कोई ॥

सर्व द्वार को संयम करे ॥ मन को रोक हृदा में धरे ॥ १४७ ॥

भमर गुफा में धर ही ध्यान ॥ यह विध योग धारणा जान ॥

पवन गगन में प्राप्त होई ॥ महाधुनी उप जावे सोई ॥ १४८ ॥

घण्टा नाद बाजे अति तूर ॥ जासों सिद्धि जानो मत दूर ॥

दोहा ॥

प्र० यो०

५१॥

पूरक तो ब्रह्मा भयो कुम्भक विष्णु जान ॥

रेचक शिवको मानिये वाटक निज निर वान ॥

प्राणायाम के गगन में ध्यावे आतम वीर ॥

तजे वासना जगतकी चम्पा संतसो धीर ॥ १४९ ॥

इति प्राणायामः ॥

अथ अष्ट कुम्भक ॥

चौपाई ॥

सूर्य भेदन मुज्जई सोई ॥ सितकारी सितली शुभ होई ॥

भस्त्री का भरमारि ये जानो ॥ मूर्छा छावनी कुम्भक मानो १५०॥

अथ सूर्य भेदन ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥५२॥

आसन कोमल जो सुख कारी ॥ ता पर बैठ करे विध सारी ॥
वज्रासन को करौ अभ्यासा ॥ सूर्य के घर पूरे श्वासा १५१ ॥
नख शिख लो कुंभक को धारे ॥ चंदर के घर रेचक डारे ॥
वार वार यह साधन गहे ॥ तब शित काल उष्णता रहे १५२ ॥
कर्म रोग बाय को हने ॥ कपाल शोधन या को गने ॥
विना अग्नि पावे आराम ॥ सूर्य भेदन याको नाम १५३ ॥

दोहा ॥

अ० यो०

सूर्य भेदन साधिये सूर्य चलता होई ॥

॥ ५३ ॥

गर्मा कोस प्राप्त करे शीत रहे नहीं कोई ॥

अथ मुज्जाई ॥

चौपाई ॥

दौ सूर को पूरे सार ॥ मुख को मुन्द रहे निर धार ॥

कुंभक राखे हृदय समाई ॥ चन्द्र नाडि रेचक कर वाई १५४

बार बार ऐसे कर भाई ॥ सकल रोग को हरे मुज्जाई ॥

श्लेष्म रोग दूर करावे ॥ जठर अग्निको अधिक बधावे १५५

प्र. यो.

५४॥

नाडो मे जालन्धर रोग ॥ धातु खीन मन व्यापे सोग ॥
एते रोग सब दूर गमावे ॥ मुज्जाई कुंभक सुख उप जावे १५६

दोहा ॥

वैठा उठता चल्ता वीर मुज्जाई कुंभक करे ॥
चम्पा नाथ सुधीर जव लौ रोग हि सब हरे ॥

अथ सित्कारी ॥

चौपाई ॥

जिह्वा आणि दांत विच देवे ॥ चाडि पवन मुख मा लेजावे ॥
कुंभक रोक उदर में भरे ॥ दो नासा सों रेचक करे ॥ १५७
शीत पवन सदा पीवो भाई ॥ सहज पचावे छिक जंभाई ॥
क्षुधा तृषा निद्राहि नासे ॥ आलस छाण्ड सदा अभ्यासे १५८

तालू रसना धरे उलटाई ॥ पवना पीवे सहज सुभाई ॥

अ० यो०

रोग न रहे देह में कोई ॥ मण्डल में योगीन्द्र होई ॥ १५९

॥५५॥

अथ सितली ॥

चौपाई ॥

जिह्वा सो करि पीवे वाय ॥ कुम्भक राखे हृदय लगाय ॥

द॥ सरां मे रेचक ताको ॥ उष्ण काल में साधे ताको १६० ॥

सब तन में शीतलता होई ॥ गरमी नाम रहे नहि कोई ॥

गुलमी फियो कानके रोग ॥ सितली कुंभक करहीं सोग १६१

अ० यो०

॥५६॥

दोहा ॥ १६३ ॥

शीत कारि प्रसू शीतली राहमजाने कोय ।

उष्ण काल में साधिये चम्पा सित नहि होय ॥

अथ मस्त्रिका ॥

चौपाई ॥

पद्मासन की बैठक साधे ॥ मुख से मूध जलंधर बाधे ॥

घ्राण द्वारा से रचे घ्राण अनाम अथ दृष्टी समान ॥ १६३ ॥

रेचकें पूकरे बार वारा ॥ जैसे धुवन धुवे लोहारा ॥

ऐसे योगी पवन चलावे ॥ ब्रह्म द्वार कोयुं प्रछलावे ॥ १६४ ॥

अ० यो०

॥५७॥

जवे थकेलो जाने देही ॥ तव सूर्य उपर में लेही ॥

गंग जमन के रोके घाट । तहां जडो लंबीका वाट ॥ १६५ ॥

कुंभक करि हृदय में धरे ॥ सुक पात ज्युं धरणी परे ॥

ईडा के घर रेचे प्राण ॥ तव चडे गगन अपान ॥ १६६ ॥

वात पित्त कफ कुंभक हरे ॥ मन्दा अग्नी प्रवलकरे ॥

जाते वेग सर्पणि जागे ॥ भमर गुफा के मार्ग लागे ॥ १६७ ॥

जवही नागनि सूधी होई ॥ आनन्द सब की दाता सोई ॥

कफ जाली को दूर करावे ॥ ब्रह्म नाडी को मार्ग पावे १६८

पट चतुर को पवना भेदे ॥ तीन ग्रन्थि को नीका छेदे ॥

शिवके मन्दर शक्तिको ल्यावे ॥ भस्त्रानाम कुम्भक कहावे १६९

दोहा

अ. यो.

॥ ५८ ॥

ब्रह्म अग्नी परगट करे हीरा देखे नैन ॥

पवन अमल माता रहे सुने अनाहद वैन ॥

संयम ताकी अग्नि कर इंधन कर्म जलाय ॥

इडा पिंगला धराणि कर मन को जोते ताइ ॥

अथ भ्रमरी ॥

चौपाई ॥

जैसे ज्ञान घ्राण ते कीजे ॥ ऐसे उर्ध्व को पूरक कीजे ॥

कपाली सुरछीचे भंगनादी ॥ विनदेखे क्युं लहिये स्वादी १७०

प्र० यो०

॥५९॥

भ्रंगी नाद ये रेंचक करहीं ॥ मन विचार ये कुम्भक हरहीं ॥
 योगिन्द्र यह करे अभ्यासा ॥ चिदात्मानन्द रूपका प्यासा १७१
 पुंगी नाद सुन सर्प सुख पावे ॥ नाद सुनी मृगचलता आवे ॥
 नाद रूप ब्रह्म है जोई ॥ विना नाद प्रतीत न होई ॥ १७२ ॥
 भ्रंगी कुम्भक याको नाम ॥ जामे मन पावे विश्राम ॥
 दूजी व्रत सवे विश्रावे ॥ निजा नन्द पद मूर्छा पावे ॥ १७३ ॥

अथ मूर्छाकुम्भक ॥

चौपाई ॥

पूरक करे जलन्धर वध दीजे ॥ रेंचक कर पाछे नहीं लीजे ॥
 शक्ति होवे सोलायुं रहे ॥ मूर्छा कुम्भक यासो कहे ॥ १७४ ॥

दोहा

श्र. यो.

॥५८॥

ब्रह्म अग्नी परगट करे हीरा देखे नैन ॥

पवन अमल माता रहे सुने अनाहद वैन ॥

संयम ताकी अग्नि कर इंधन कर्म जलाय ॥

इडा पिंगला धराणि कर मन को जीते ताइ ॥

अथ भ्रमरी ॥

चौपाई ॥

जैसे ज्ञान घ्राण ते कीजे ॥ ऐसे उर्ध को पूरक कीजे ॥

कपाली सुरलीचे भ्रंगनादी ॥ विनदेखे क्युं लहिये स्वादी १७०

श्र० यो०

॥५९॥

भ्रंगी नाद ये रेंचक करहीं ॥ मन विचार ये कुम्भक हरहीं ॥
 योगिन्द्र यह करे अभ्यासा ॥ चिदाभ्यानन्द रूपका प्यासा १७१
 पुंगी नाद सुन सर्प सुख पावे ॥ नाद सुनी मृगचलता आवे ॥
 नाद रूप ब्रह्म है जोई ॥ विना नाद प्रतीत न होई ॥ १७२ ॥
 भ्रंगी कुंभक याको नाम ॥ जामे मन पावे विश्राम ॥
 दूजी व्रत सवे विश्रावे ॥ निजा नन्द पद मूर्छा पावे ॥ १७३ ॥

अथ मूर्छाकुम्भक ॥

चौपाई ॥

पूरक करे जलन्धर वव दीजे ॥ रेचक कर पाछे नहीं लीजे ॥
 शक्ति होवे सोलायुं रहे ॥ मूर्छा कुम्भक यासो कहे ॥ १७४ ॥

याते मन सुख प्राप्त होई ॥ हर्ष शोक नहीं व्यापे कोई ॥

अ० यो० मनके व्रत थके सब ऐसे ॥ पवन रहित दीपक है जैसे १७५

॥६०॥

दोहा ॥

मन चंचल निश्चय करे यहि पन्थ तत्त्वसार ॥

इन्द्री पोषे मन मुखी चम्पामूढ गवार ॥

अथ प्रलावनी ॥

चौपाई ॥

उलटी उद्गा उदर में भरे ॥ वार वार ये आरंभ करे ॥

उदर तभी सम पूरण होई ॥ वली पेट रहे नहि कोई ॥ १७६

अ० यो० । उलटी उदगा कण्ठ सो ले है ॥ वार वार पेटको भरि है ॥
प्रलावनि कुंभक या विधि करे ॥ उडे अकाशजलमें तरे १७७

॥६१॥

अथ केवल कुंभक ॥

चौपाई ॥

केवल कुंभक जाके सिध होई ॥ ताके श्वास उसास न कोई ॥
स्वर्ग पताल तीनहं माही ॥ वासो दुर्लभ कलुवि नाई ॥ १७८
रेचक पूरक कुंभक सार ॥ प्राणायाम है तीन प्रकार ॥
भीतर मंजनयासो होई ॥ रज तम पाप लगे नहीं कोई १७९॥



श्र.यो.

॥६२॥

सकल नाडियां शुद्धता लहे ॥ तव केवल कुंभक स्थिर रहे ॥
 सने सने कर रोके प्राण ॥ हुंकर पीवे प्राण अपान ॥ १८०॥
 जवलन केवल कुंभक सिधहोई ॥ तव लगरेचक पूरक संजोई
 मध्यके मार्ग पवन समावे ॥ तव यहयोग सिधि कहां पावे १८१
 जांके केवल कुंभक होई ॥ तांके पाप रहे नहि कोई ॥
 वासो गोप्य कलु नहि रहे ॥ तीन लोक की वातां कहे १८२

दोहा ॥

कुंभक नाना भेदके तासों जीते प्राण ॥
 गुरुपासो पाइए पूरण पद निर्वाण ॥

अ० यो०

॥६३॥

मुद्रा माही खचरी ज्युलै योगमे नाद ॥

सर्वासन में सिद्धि है सो केवल कुंभक अगाध ॥

चौपाई ॥

ता योगी के लक्षण ऐसे ॥ योग शास्त्र में भाषे जैसे ॥

उज्जल कोमल रहे शरीर ॥ वदन प्रसनता हृदे गभीर ॥ १८३

निर्मल नेत्र परगट नाद ॥ विषय जीव से करे न वाद ॥

सदा अरोग्य विन्दु स्थिर रहे ॥ अग्नि दपिवत पातक दहे १८४

हठ योगी के लक्षण येही ॥ प्रगट दिसे छिप रहे न केही ॥

अचल दृष्टकर निरखे धरणी ॥ सूरति गगन ये वडकरणी १८५

आसन मुद्रा कुंभक ध्यान ॥ अजपा मंत्र ब्रह्म ज्ञान ॥
इवट अंग ईश्वर की काया ॥ योगी साथे लिपे न माया १८६
दोहा ॥

चम्पा लक्षण योग परघट कहे सुनाय ॥
जाके दर्शन करतहि मन प्रसन्न होजाय ॥
इति अष्ट कुंभकः ॥

अथ प्रत्याहार ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥ ६५ ॥

जहां जहां मन विकल्पे भाई ॥ महा चंचल ये गमन कराई ॥
 तहां तहां सो उलटा ल्यावे ॥ आत्म माहीं आन वसावे १८७
 मोक्ष मार्ग में विघ्न करावे ॥ पंडित हुंको मन भरमावे ॥
 तान्ते इन्द्रो महाबलवान् ॥ मनको हरे यह बड़ी अमान १८८
 सर्व इंद्रो संयम कर लीजे ॥ आत्माको चितवन कर दीजे ॥
 योगयुक्ति सों बसकर भाई ॥ निश्चय बुधिरसहजसभाई १८९
 यह मन संकल्प वणजावे ॥ महा प्रमाद कर विषयको ध्यावे ॥
 यांते यह मन का उलटाई ॥ योगध्यानमें आन वसाई १९० ॥

अ.यो.
॥६६॥

यह उपाय मनको बस कीजे ॥ इन्द्री संग जान नहि दीजे ॥
 आतमसुख सम और न कोई ॥ तां देखेअति आनन्दहोई १९१
 जे जे शब्द श्रवण सुने ॥ प्रिय अप्रिय मन में गुणे ॥
 तहां तहां सब आतम जाने ॥ मन की वृत्ती अपुठी आने १९२
 जो जो रूप नैन सो देखे ॥ चम्पा मनको उलटा छेके ॥
 चंचल नेत्र राखो ठहराई ॥ यह प्रतिहार नाम कहाई १९३ ॥
 ज्यों तीजा पहरको सूर्य होई ॥ अपना तेज समेटे सोई ॥
 ऐसे योगी गहे प्रति हार ॥ यांते मन का मिटे विकार १९४ ॥
 रसना करे स्वाद को हेत ॥ तहांते योगी उलटो लेत ॥
 नाम नरिंजन निस दिन भजे ॥ यह विधि योगी विषयां तजे १९५

अ० यो०

॥६७॥

नासिका लेवे वास शुवास ॥ प्रीति लगाय सराहे प्रकास ॥

तांमे योगी चित नहि देवे ॥ आत्मज्ञान शुरत कर लेवे १९६ ॥

कूर्म अपनो अंग छुपावे ॥ हाथ पांव मुख भीतर ल्यावे ॥

ऐसो मन इन्द्री वस करे ॥ योगी ले आत्मामें धरे १९७ ॥

जहां जहां इन्द्री मन जावे ॥ तहां तहां ते उलटा ल्यावे ॥

आत्मा मांही रहे ठहराई ॥ ऐसा करता रहे समाई १९८ ॥

तां ते विषय संग नहि कीजे ॥ चम्पा नाथ जानि मन लीजे ॥

यह प्रतिहार जानि निजसार ॥ जांते मनका तजो विकार १९९

इन्द्री पांच छटो मन भाई ॥ अमृत जान विष को खाई ॥

येही वडे विघनके मूल ॥ इनको पकड दीजये मूल २०० ॥

अयो०

॥६८॥

जो मन करे विषय को ध्याना ॥ यांते विसरे रूप निधाना ॥
 संकल्पकर चंचलहोई ॥ जांवे बिन्द कछुहाथ नहि आई २० १
 पुरुष रूप है घृत समाना ॥ अग्नि कुंड नारी को जाना ॥
 घृत टरे होवे तनु भंगा ॥ तांते योगी करे न संगी ॥ २० २ ॥
 मन संकल्प रहे नहि कोई ॥ ज्युं निरवात मे दीपकहोई ॥
 चंचलता तज निश्चल होवे ॥ तेधारण अच्छी विध पावे २० ३

दोहा ॥

प्र० यो०

॥६९॥

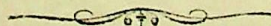
दुर्लभ मनको जीतबो दुरलभ विषया त्याग ॥

दुर्लभ धारण तत्वकी दुर्लभ दृढ वैराग ॥

मन जीतन को साज है जप तप संत समाज ॥

मन जीते विन कछु नहीं चम्पा ज्ञान विराग ॥

इति प्रत्याहारः ॥



• अथ पंचतत्त्वधारणा ॥

अ.यो.

चौपाई ॥

॥७०॥

हृदय पांच भूतन का वास ॥ पृथ्वी अप तेज वायु आकाश ॥

गुरुप्रसाद धारणा पाऊं ॥ न्यारी न्यारी कह समझाऊं २०४॥

हृदये अन्दर पृथ्वी खानो ॥ चार कोण पीलो रंग जानो ॥

जाके मध्य ब्रह्मा जी देव ॥ मन पवनाले कीजे सेव ॥ २०५॥

ओंरंनमः॥ यह मंत्र अराधे ॥ पांचघडी प्राणको साधे ॥

अस्थभनी धारणा येही ॥ याको साधकर जीते देही॥२०६॥

अ० यो०

॥७१॥

दूजी धारणा जलकी जाने ॥ वाका वासा कण्ठ स्थाने ॥

अर्द्ध चन्द्र श्वतरंग छाजे ॥ तांके मध प्रभु विष्णुविराजे २०७

ओंवंनमः॥ यह मंत्र विचारे ॥ पंच घड़ी चित बन कर धारे ॥

मन प्राण तहां लीन हु जावे ॥ यह धारण कोई विरला पावे २०८

यांते महां काल टल जाई ॥ वारुणी धारण नाम कहाई ॥

अव तीजी धारण तेजकिजान ॥ तालुमूल जाको अस्थान २०९

रक्त वरण त्रिकुटी जहां ॥ रुद्र देव विराजे तहां ॥

ओंसनमः॥ ऐसा जाप जो निश्चयकरे ॥ ता स्थानमें पवनधरे २१०

पंच घड़ी लग प्राण समावे ॥ तनउ मनकी सुघ न रहावे ॥

ब्रह्मा अग्नीका अनातपकरे ॥ अनेक जन्मके पातकजरे २११

अ० यो०

॥७२॥

अग्नि धारणा याको नाम ॥ कमल ब्रह्मको कहिये धाम ॥
 योगी रहे या धारण मांहीं ॥ बांको अग्न तपावे नांहीं २१२ ॥
 चौथी धारण वायु कि देखे ॥ मुर मध्ये काजल कों पेखे ॥
 ईश्वर देव विराजे तांहीं ॥ सत्य रूप सब देवन मांहीं २१३ ॥

ओंयंनमः ॥

यह मंत्र को जपले भाई ॥ मन पवना तामांहि समाई ॥
 पंच घडी प्राणतिथर रहे ॥ यासो वायु धारणा कहे ॥ २१४ ॥
 योगी गमन करे आकासा ॥ सिद्धां के संग विचरे तासा ॥
 इच्छा धरि सोई रूप बनावे ॥ पंचतत्व में देह मिलावे ॥ २१५ ॥

अ० यो०

॥७३॥

सदा रहे पवन आधारा ॥ क्षुधातृषा नहीं लागारा ॥
 जाकी छाया देखे नाहीं ॥ ईश्वररूप रमे जग मांहीं २१६ ॥
 वायु धारणा यह कहावे ॥ पूर्व जन्म के तपसे पावे ॥
 सदा पवित्र रसना रहे ॥ वाके दर्स मुक्तिपद लहे ॥ २१७ ॥
 अब पांचमी धारणा कहि सुनाई ॥ जाको तम आकास कहाई
 पवन रहित समुंदर जैसो ॥ सरद चान्दनी उज्जल तैसो २१८ ॥
 भमर गुफामें ऐसो ध्यावे ॥ मोक्ष कपाट अपे खुल जावे ॥
 आदि नाथ सदा सिव जाहां ॥ ओं ह्रीं नमः ॥ मंत्र ताहां २१९ ॥
 पंचघाडि प्राण तहां समावे ॥ मन पवना तामाहीं मिलावे ॥
 यह आकाश धारणा जानो ॥ संपूरण व्यापक यहि मानो २२० ॥

अ. यो.

॥७४॥

दहणी धारणा तेजकि कहिये ॥ भ्रामणीधारण वायसौ लहिये॥
 सोपणिहै आकासा ॥ चम्पानाथ कहे किरवासा २२१ ॥
 कर्मणा मनसा वाचा मानो ॥ यह पंच धारण दुर्लभ जानो ॥
 योगधारणा दुर्लभ जाने ॥ असुबाजीवा नहिपरमाने २२२ ॥
 पंच देव यातनके मांहीं ॥ ताको योगी विसरे नाहीं ॥

दोहा ॥

पंच तत्व की धारणा मनजीतन को जान ॥
 चम्पा नाथ विचार ले जैसे धरिये ध्यान ॥

अ० यो०

॥७५॥

अथ षट् चक्र ध्यान ॥

चौपाई ॥

प्रथम चक्र है मूल अधारा ॥ तत्त केचन सो रंग निहारा २२३॥
 चार पंखड़ी अक्षर चारी ॥ जाके मध गण पति अधिकारी ॥
 कुंडलनीका जानो स्थाना ॥ तासों कहिये मूल ध्याना २२४॥
 नासा अग्र दृष्टि को धरे ॥ ऐसा ध्यान नित मनसों करे ॥
 याके पाप रहे नहि कोई ॥ निज या पद सुख आनन्द होई २२५॥
 या ध्यान से उलटे वाय ॥ सूक्ष्मण जोति रूप दरसाय ॥
 दूजा ध्यान लिंग अस्थाना ॥ जहां चक्र है स्वाधिष्ठाना २२६॥

अ० यो०

॥७६॥

षट् दल में षट् अक्षर जांहीं ॥ ब्रह्मा देव विराजे तांहीं ॥
 नासा अग्र दृष्ट कर ध्यावे ॥ पीत वरण परमात्मा पावे २२७॥
 या ध्यान से उपजे ज्ञान ॥ योगी होवे ब्रह्म समान ॥
 तीजा ध्यान है नाभि स्थाना ॥ बांको नाम मणि पूरक जाना २२८
 मध्यान्ह काल का सूर्य जो है ॥ ऐसो रंग मणि पूरकका है ॥
 दश पंखडि दश अक्षर मांहीं ॥ विष्णु देव विराजत तांहीं ॥
 नासा अग्र दृष्ट कर ध्यावे ॥ जांके ध्यान मुक्ति पद पावे ॥
 चौथा ध्यान है हृदयस्थाना ॥ अनाहद चक्र जिसे परिणामा २२९
 द्वादश दल कमल के मांहीं ॥ पंख पंख पर अक्षर जांहीं ॥
 हृदय कमल प्रकासे ऐसो ॥ प्रचण्ड सूर्य प्रलयको जैसो २३०

अ० यो०
॥७७॥

मानस विज दुर्मलक जहां ॥ शम्भूनाथ विराजे तहां ॥
 नासा अग्र दृष्टि कर ध्यावे ॥ शिवपरताप अमरपद पावे २३२
 शक्ती अपनी सुन के मांहीं ॥ तांसो गोप्य कछु भी नांहीं ॥
 पंचमध्यान कण्ठके मांहीं ॥ अमृत कूप कहावे तांहीं २३३ ॥
 तीन चूब कभि सुध से नामा ॥ षोडश पंखडी अमृत धामा
 सुर संयुक्ति अक्षर कहावे ॥ ते पंख पंख के मांहि समावे २३४ ॥
 शुध दीपक की परभा होई ॥ ऐसो जीव तहां है सोई ॥
 नासा अग्र दृष्टि सो देखे ॥ ऐसो आत्मा ध्यान करि लेखे २३५
 तां योगी को मृत नहि आवे ॥ दुखसो छूट योग पद पावे ॥
 अमृत सरवे तो को पजि ॥ चंद्र मंडलमें लविका दीजे २३६

अ. यो.

॥७८॥

षोडश दल अमृत का कूँआ ॥ योगी पीपी अंमरहुवा ॥
 छटवां ध्यान भुमध्य मे जोई ॥ मानो शिखा अग्नि की होई ॥
 विन वातीका दीपक जोहै ॥ भूमध्य परमेश्वर तेहै । [२३७]
 आज्ञाचक्र जांकोहै नाम ॥ ज्योति लिंग ईश्वरको धाम २३८॥
 दोपंखडी कहिये जाके ॥ दोअक्षर गमन है तांके ॥
 धन्य योगी जन जीतेप्राण ॥ आठो पहर अखण्डत ध्यान २३९
 निर्गुण शिव परमात्म रूपा ॥ जुगके आदि सब सिधके भूपा॥
 नासा अगर आत्माध्यावे ॥ योग युक्ति मुक्ती पद पावे २४०॥
 आकाश ऊपर ज्योति स्थाना ॥ तैसे जानो सबदिसमाना ॥
 योध्यान योगीजन करे ॥ ता प्रसाद अनन्त भव तरे २४१ ॥

अ. यो.

॥७९॥

ज्ञाना नन्द पद प्राप्त होई ॥ यांको भ्रम रहे नहि कोई ॥
 ब्रह्म रंभरे ब्रह्मको धामा ॥ भ्रमर गुफा है तां को नामा २४२ ॥
 तहां सहस्र दल कमल धियावे ॥ तव नासाग्र दृष्टि रहावे ॥
 जैसो निर्मल है आकासा ॥ स्वेत फटिक है सो परकासा २४३ ॥
 जैसे निर्मल सर्द की रानि ॥ ऐसो ध्यान धरे सिध सुनि ॥
 सहस्र दलमें प्राण समावे ॥ मन संकल्प सभी मिट जावे २४४ ॥
 योगी आत्मा सब में जाने ॥ सकल जगत सो आपमे माने ॥
 यह ध्यान से ऐसो होई ॥ जीव ब्रह्मका भेद न कोई २४५ ॥
 अहं ब्रह्मास्मि ऐसो कहे ॥ जीव जोति निरन्तर रहे ॥
 अष्ट सिद्धि रहे संग जाके ॥ चितवन करे सो हाजिर बांके २४६ ॥

अ० यो०

॥८०॥

यह संकल्प करे नहि भाई ॥ अलख पुरुष में रहे समाई ॥

कर्ता हर्ता समर्थ आप ॥ ना काहू का जपे न जाप २१७॥

मुष्टि न आवे दृष्टि न पडे ॥ दया करे तांके दुख हरे ॥

जां के शस्त्र भिदे नहि देही ॥ यंत्र मंत्र लिपे नहि कोई २४८॥

तां योगी का वज्र शरीर ॥ अरु विष पीवे अमृत नीर ॥

दोहा ॥

यह ध्यान यासो कहयो तामे रहे समाई ॥

नासा अपनी राखिये तब भेदा भेद मिट जाई ॥

नैनां अंदर देखिये अपनो रूप सरूप ॥

गुरु प्रताप चन्पा कहे ऐसी वस्तु अनूप ॥

दोहा ॥

अ० यो०

॥८१॥

कोटि यज्ञ के किथे को जप तप कीये सो होई ॥
ध्यान सोलह कला सो पल पत्र नहि होई ॥
एक घड़ी आधी घड़ी लगे सुद्ध ब्रह्म ध्यान ॥
ता पुण्य के सहस्र इक तीर्थ तप व्रत ज्ञान ॥
आदि अत आठो पहर रहे ध्यान ही माय ॥
महमा उन योगीन की कांपै वरणी जाय ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥८२॥

योगी ध्यान धरे जो ऐसे ॥ ज्युं विषभरी कामनी तैसे २४९ ॥

रात दिवस भरतान विसारे ॥ ज्यौजन ध्यान धनी को धारे ॥

कीटभ्रंग होई के ध्यावे ॥ चन्द्र चकोरलो ध्यान लगावे २५० ॥

ऐसा कोई साधू होई ॥ आत्म ध्यानी कहि ये सोई ॥ [२५१]

सम आसन सम काय विचारे ॥ सम ग्रीवा कर ध्यान जु धारे ॥

नासा अग्र नैन चितदेई ॥ परम जोति परचे करलेई ॥ [२५२]

परम जोति निरन्तर दूरसे ॥ तव और वाहर सुख नहि परसे ॥

याविध मन अपने वस होई ॥ तव विराट् में मन धरि सोई ॥

अ०यो०

॥८३॥

भवन चतुरदस अप नो जाने ॥ एक जानि दुइत को भाने ॥
शुद्ध निरंजन एक विचारे ॥ अखंड रूप निरन्तर सारे ॥ [२५३]
तव मन निश्चल आपे होई ॥ संकल्प मात्र रहे नहि कोई ॥ २५४
जीव वासना सब मिटजावे ॥ तवहि परम समाधि को पावे ॥

सोरठा ॥

मन की मिटे जो वासना निरवासी जव होइ ॥
चम्पानाथ कह एकही जीव ब्रह्म नहि दोइ ॥

इति ध्यानम् ॥



अथ समाधि ॥

चौपाई ॥

अयो०

॥८४॥

ज्यों व्यापक सारे आकाशा ॥ बाहर भीतर निरंतर वासा २५५
ऐसे आत्मा पूरण माने ॥ यह समाधि के लक्षण जाने ॥
शुद्ध निरंजन निश्चल आप ॥ सत्य स्वरूप पुन्य नहि पाप २५६
आप अजन्मा निर्गुण सोई ॥ एक चितन्य और नहि कोई ॥
ब्रह्मविचार निरंतर करे ॥ सब आकार दूरि पर हरे ॥ २५७ ॥
आत्मा ब्रह्म एक कर देखे ॥ चेतन रूप अखण्डत लेखे ॥
निजानन्द निश्चल निरधारा ॥ अलेख पुरुष वारनहीं पारा २५८

अ० यो०

॥८५॥

काल न कर्म न जीव न माया ॥ आपे आप निरंजन राया ॥
 जैसे अग्न अखंडत होई ॥ तांते डठे पतंगा सोई ॥ २५९ ॥
 वहु अग्नही माहि समावे ॥ तव हि पतंगा नाम मिटावे ॥
 ऐसे आत्मा ब्रह्म विचारे ॥ एक जान कर द्वैत निवारे ॥ २६० ॥
 ज्युं सागर में बुंद समावे ॥ चम्पा जीव ब्रह्म मिल जावे ॥
 ऐसी भांति विचारहि करते ॥ निस दिन ब्रह्म मांहि चितधरते ॥ २६१ ॥
 त्रिगुणा कार सकल भ्रम भागे ॥ होवे ब्रह्म सोवत त्यों जागे ॥
 है कर ब्रह्म ब्रह्म मिल जावे ॥ जाहूं ते बहु रोग न आवे ॥ २६२ ॥
 ऐसी विध मन दुःख न देवे ॥ आत्मा निजानन्द पद लैवे ॥

दोहा ॥

अ.यो.

॥८६॥

आत्म ज्ञान निश्चय करे तौ लय मोक्ष निर्वाण ॥

यह समजी चम्पा कहे साधनते सिद्ध जान ॥

जीव समावे ब्रह्म में बहुर न विसरे कोइ ॥

ब्रह्म जीव एकै भये बहुर न दूजो होइ ॥

चौपाई ॥

आसन मुद्रा कुंभक साधे ॥ वार वार पूरक को साधे ॥ २६३

प्राण अपान एक है जाई ॥ स्थिर के श्वास न विसरे कोई ॥

नाद विन्द एककर ल्यावे ॥ मन पवना घट माहि समावे २६४

अ. यो.

॥८७॥

आत्मा तत्वमें होवे लीन ॥ जैसे जलमें विचरे मीन ॥
 जैसे पानी नून समावे ॥ जैसे जलमे दूध मिलावे ॥ २६५
 त्वं जीवात्मा प्रमात्मा माहीं ॥ होवे लीन देह सुध नाहीं ॥
 शीतउष्णकी गम नहि कोई ॥ वन वस्ती जाको समहोई २६६
 निजानन्द पद माहि समावे ॥ वाको नाम समाधि कहावे ॥

सोरठा

वे भये ब्रह्म में लीन हृद छण्ड वेहृद हुवे भूलगये गुण तीन ॥
 सकल मटाई वासना भये जोति में लीन ॥

चौपाई ॥

मनपवन भमरगुफा माहि समावे ॥ चम्पा यासो समाधिकहावे ॥

अ० यो०

॥८८॥

जाके श्वास सास ना कोई ॥ परम समाधी जाणो सोई २६७॥
 शक्ति आपान ऊर्धको ल्यावे ॥ शिवके मन्दर जाय समावे ॥
 जबही नादविन्दका मेला ॥ चन्दर सूर्य केक कर भेला २६८ ॥
 प्रकृति पुरुष का मेल कहावे ॥ चंदर के घर सूर्य समावे ॥
 सूर्य धरे चंदरके मांही ॥ जब काया की छाया नाही ॥ २६९ ॥
 सो योगीश्वर ब्रह्म स्वरूपा ॥ जीवन मुक्त जीवन के भूपा ॥
 जांके नाद विंद स्थिर होई ॥ वा सम पूज्य और ना कोई २७०

दोहा ॥

यह निस योगा भ्यास में सदा रहे लोलाय ॥

वह समाधी सुख सो लहे यम घर कदे न जाय ॥

अ० यो०

॥८९॥

गुरु कृपा यम आदि कहे प्रणायाम प्रति हार ॥
धारणा ध्यान समाधि को चम्पा कियो विचार ॥
इति समाधि ॥

अथ दशमुद्रा महा मुद्रा ॥
चौपाई ॥

वामे पग की एडी लीजे ॥ योनि द्वार के बीच दीजे ॥
दहणो पग पसारे लांवो ॥ दौ करते हि पकडे फांवो ॥२७१॥

अ.यो.

॥९०॥

गोडा ऊपर धरे ललाट ॥ वायू पूरे मुख की वाट ॥

तालू मूल लंविका देवे ॥ अपान वायु ऊरध को लेवे ॥ २७२ ॥

कुंभक राखे शक्ति समान ॥ रेचक करे पिंगला आन ॥

चंद्र चले तव करे अभ्यासा ॥ सूर्य पूरे चंद्र निकास ॥ २७३ ॥

चंद्र पूरके कुंभ कराइये ॥ ये फिर सूर्य रेचकरि नाइये ॥

वारांप्राणायाम १२इसे करलीजे ॥ पाछे मुद्रा विसर्जनकीजे ॥ २७४ ॥

वामे दक्षिण करे अभ्यासा ॥ या मुद्रा का बडा तमासा ॥

खेचरि बीज का कीजे जाप ॥ यांकी कायां लिपे न पाप ॥ २७५ ॥

महामुद्रा है जांकी नाम ॥ कुंडली को डण्ड समान ॥

सूधी हो जेवरी जैसे ॥ डण्डा हते सरप को तैसे ॥ २७६ ॥

अ० यो०

॥११॥

जरा मृत को मेटे दोष ॥ देही को उप जावे पोष ॥

साधकको यहि सिद्धके दाता ॥ अमृत सो कर चीषे गाता २७७

अथ महावन्ध ॥

चौपाई ॥

वामे पग की एडी लीजे ॥ मूल द्वार के नीचे दीजे ॥

दहणो पग वामे दिस करे ॥ गोडा ऊपर गोडा धरे २७८ ॥

मुख मारग ले पूरे वाय ॥ ठाडी राखे गले लगाय ॥

गुदा योनि संकोचन करे ॥ अपान वायु गगन को फिरे २७९

अभ्यु०

॥९२॥

कुम्भक राखे शक्ति समान ॥ सने सने कर रेचे प्राण ॥

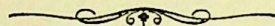
वामे दक्षण मार्ग अनु सरे ॥ पाछे मुद्रा विसर्जन करे २८० ॥

महाबन्ध है याको नाम ॥ योगी साधे पूरण काम ॥

महा सिद्धिको दायक येही ॥ कालपाश को मेटे तेही २८१ ॥

सकल पवन ऊरध को आवे ॥ त्रैवेणी में जाय समावे ॥

प्रायागादि तीर्थ हैं जाहां ॥ किदारनाथ धाम है ताहां २८२ ॥



अथ महावेध ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥९३॥

वाय जंघ पर दहणो पांव ॥ दहणि जंघ पर वाउं ल्यांव ॥
दोउ हाथ धरत पर धरे ॥ आसन उठाय अधर तन करे २८३ ॥
निश्चल मनकर पूरे वाय ॥ इडापिंगला वेध लगाय ॥
उछलि उछलि धरत पर पडे ॥ वार वार ऐसी विधि करे २८४ ॥
षट् चक्रको वेधे कोई ॥ वज्र कपाट को भेदे सोई ॥
अग्नी उपजे अमृत परे ॥ महा वेध एता गुण करे ॥ २८५ ॥
पसेव चले सु मर्दन कीजे ॥ माया बीज सु मान कर लीजे ॥
सने सने कर छोडे प्राण ॥ जांते पावे पद निर्वाण ॥ २८६ ॥

अ. यो.

॥९४॥

गगन गुफा ते अमृत ल्यावे ॥ सब देही को रोग नसावे ॥
 स्वेत वाल से काला होई ॥ जरा मृत्तका भय नहि कोई ॥ २८७ ॥
 महा वेध है यांको नाम ॥ साधक लहे ब्रह्म में धाम ॥
 महा सिद्धि को देवे यह ॥ ब्रह्म अग्नी प्रदीत रह ॥ २८८ ॥
 महा मुद्रा महा बन्ध भाई ॥ महा वेध तीन गुण गाई ॥
 उत्तम साधक इन्को सेवे ॥ अष्ट सिद्धि ये उन्को देवे ॥ २८९ ॥
 निर्मल कोमल सूखम गाता ॥ अणिमादिक सब गुणके दाता ॥
 इन्को साधु राखे गोप्य ॥ भले शिष्य को देवे सौख्य ॥ २९० ॥

दोहा ॥

अ. यो.

एक भेदको जान ये नाम धरे हैं तीन ॥

॥९५॥

गुह्य वस्तु परगट करे चम्पानाथ प्रवीन ॥

अथ खेचरी

चौपाई ॥

प्रथमे सैन्धो लून मगावे ॥ तामें हरछें मिश्र मिलाने ॥

महीन पीसकर चूरण कीजे ॥ चिमटी भरे जिह्वातल दोजे २९१

अंगुलि अग्र मुख माही धाले ॥ जीभ तलेकी नसको चाले ॥

बन्ध रूप तवे ना होई ॥ एक पक्ष में प्रगटे सोई ॥ २९२

अ० यो०

॥ ९६ ॥

निर्मल शस्त्र तीक्ष्ण धारा ॥ थोर पत्र ऐसो आकारा ॥
 तासो काटे नसकी जाल ॥ सने सने हि एक ख्वाल १९३ ॥
 महीन वस्त्र की वाती कीजे ॥ चूर्ण मिलाय ता पर दीजे ॥
 निस दिन जपे हंसका जाप ॥ उर्द्ध जीभकर राखे आप २९४
 आठमे दिन आदितके वार ॥ राम मात्र कीजे प्रहार ॥
 जिह्वा उलटि तालवे जावे ॥ तोलग यह आरम्भ करावे २९५
 पाछे दोहन कीजे वीर ॥ अपना मनकर राखे थीर ॥
 चोखो कोमल वस्त्र लीजे ॥ जलमें भिगो रसना पर दीजे २९६
 दोउं कर पकड़ि मुख बाहर खैचे ॥ वामे दहणी ऊचे नीचे ॥
 निज मण सुरत मंत्र में धरे ॥ ब्रह्म मुहुर्त में दोहन करे २९७

अ० यो०

॥ १७ ॥

भ्रुवके मध्य सपरसे जाई ॥ तौलो दुहन करे चित लाई ॥
 ब्रह्म विवर को जब ही जावे ॥ योग शास्त्र में ऐसे गावे २९८
 साधक सबे मनोरथ होई ॥ पाछे साधन करे न कोई ॥
 सकल जीवकी मिटेउपाधी ॥ सहज भाव सो लगे समाधी २९९
 काम धेनु यह खेचरि जानो ॥ अमृत कला नदी पर मानो ॥
 जाके थन चारी सथान ॥ योगी पीवे अमरित पान ॥ ३००
 षाटा खारा मुख नहि देवे ॥ दूध भात घृत भोजन लेवे ॥
 साधन विषे तमोल न खावे ॥ छे मास लग कहीं न जावे ३०१
 मौन गहे बोले नहिं केही ॥ ब्रह्म चर्य्य जाके सिध होई ॥
 खेचरि मुद्रा यह सिध जान ॥ चम्पा नाथ कहे मन मान ३०२

अ० यो०

॥३८॥

सिद्धासन की बैठक कीजे ॥ वांड़ एडि जोनी तल दीजे ॥
 दहणी एडि नाभी तलकरे ॥ चरण अंगुठा पल्या विचधरे ३०३
 सूधा राखे सकल सरीर ॥ हृद ये ठाडी सकल सुधीर ॥
 भ्रुवके मध्यदृष्टिको राखे ॥ लंविका उलटि अमररस चाखे ३०४
 अपान वायू मूल स्थाना ॥ प्राण वायु हृदये में जाना ॥
 प्राण अपान एककर भाई ॥ कुंडलनीके मुखहु समाई ३०५
 मूल चक्र सो पवन चलावे ॥ षट् चक्र भेद ब्रह्म रन्ध्र आवे ॥
 सो पवन सूरज हो भाई ॥ चन्द्र मण्डल में आनि समाई ३०६
 सूर्य तेज सो चन्द्र हुवो ॥ उष्ण तासो अमृत स्रवो ॥
 जो अमृत बहुत हो भाई ॥ नासका द्वारसु निकसे आई ३०७

अ० यो०

॥११॥

सो अमृत पातर में लीजे ॥ सब देही को मर्दन कीजे ॥
 यांते होवे कोमल अंग ॥ रोग न आव रहे तन चंगा ॥ ३०८
 सकल नाडि जांते सुध होई ॥ रक्त ग्रन्थि रहे नहि कोई ॥
 मुख मार्ग जावा नहि देवे ॥ मुखको मूंद कंठ बिच लेवे ॥ ३०९

दोहा ॥

यह योग यह युक्ति है यह मुद्रा यह ध्यान ॥
 मूल बन्ध अरु खेचरी खोजे संत सुजान ॥
 अनेक जन्म अभ्यासते मेलक मुद्रा होइ ॥
 ब्रह्म द्वार जाये लगे परम समाधी सोइ ॥

अथ उडियान बंध मुद्रा ॥

अ० यो०

चौपाई ॥

॥ १०० ॥

उडियान बन्ध जोगी करे ॥ अपान खेंच प्राण मे धरे ॥

नाभी लगे पीठ सो जाये ॥ उडियान बन्ध यहनाम कहाये १०

उडन मंत्र का कीजे जाप ॥ अपान वायु होवे हि आप ॥

यां मुद्रा यांके सिध होई ॥ तां योगीको मृत्यु न कोई ११ ॥

जैसे पंक्षि गगन को धावे ॥ निराधार हो आप रहावे ॥

ऐसे हृदये स्थिर करि प्राण ॥ तांसो कहिये बंध उडियान १२

अ० यो०

॥ १०१ ॥

उडियान बन्ध प्रीती सों करे ॥ सहज सुभाय सो मनहि धरे ॥
 शास उसास उसम कर भाई ॥ वृद्ध होय तरुण हो जाई ३१३
 छे मास लग करे अभ्यासा ॥ यांको अमर होनकी आसा ॥
 सकल बन्ध में उत्तम जानो ॥ दृढ भव मुक्ति परम पदमानो ३१४

दोहा ॥

सिन्धु देख्यां हाथी डरे योगी देख्यां काल ॥
 या मुद्रा जाको भयो नहीं मृत्युको ताल ॥

अथ मुलबंध ॥

चौपाई ॥

अ० यो०

॥१०२॥

वाम पावकी एडी मोडी ॥ गुदा योनि के बीच होडी ॥
दहणी एडि नाभी तल करे ॥ मेरु डण्ड सूघा घरे ॥ १५ ॥
अपान वायु ऊपर कों ल्यावे ॥ मुल बन्ध मुद्रा यही कहावे ॥
योगि होय सो जाको जाने ॥ तासू और कछू नहि छाने ॥ १६ ॥
अपान वायु अधो गति जाने ॥ तां को फेर ऊरधको आने ॥
बलात् कार संकोचन कीजे ॥ अर्ध जान ऊरध को लीजे ॥ १७ ॥

अंकोचन है यांको नाम ॥ मुल बन्ध रहे आठोहि याम ॥

अ. यो.

योनि द्वार विच एडी देई ॥ वार वार अपूठी लेई ३१८ ॥

सने सने तव वायु समावे ॥ वंक नाडी को मार्ग पावे ॥

॥ ३० ॥

अपान वायु आपे स्थिर रहे ॥ मूल बन्ध को योगी लहे ३१९

प्राण अपान नाद बिन्द जोई ॥ मूल बन्ध से एकता होई ॥

तवही योगि सिद्धि को पावे ॥ इछा करे सोई वन आवे ३२०

प्राण अपान एकता होई ॥ बां घडी मल मूत्र न कोई ॥

बूढा होवे जवान समाना ॥ जो बन्ध राखे वायु अपाना ३२१

अपान वायु ऊरध को जावे ॥ अग्नि मण्डल में जाय समावे ॥

अग्नि शिखा तव दीर्घ होई । तवही अनाहद प्रगटे सोई ३२२

अ० यो०

॥१०४॥

शब्द अनाहद धुनि है ताहीं ॥ दीपक बले अखण्डत माहीं ॥
 चम्पा यामे मन लय पावे ॥ विष्णु परम पद वही कहावे ३२३
 अग्नि अपान दोय सम भेला ॥ योगी छुवे प्राणको मैला ॥
 सकल पवन उषणता लगे ॥ कुण्डलि छाण्ड सर्पनी जगे ३२४
 कुण्डलनी को लागे ताप ॥ सूधी होए सहज में आप ॥
 ब्रह्म नाडी में करे प्रवेसा ॥ यां ते मिटे सकल अन्हेसा ३२५॥
 योगि अमर हो जग में रहे ॥ करणी करतव कछु ना गहे ॥
 जन्न मरण का भेटे मूल ॥ तांते योगी बान्धे मूल ॥ ३२६ ॥
 मूल बन्धते ऊठे बाय ॥ नख शिख पवना रहे समाय ॥
 क्षुधा तृषा लागेहि नाहीं ॥ अमरित रहे देह के माहीं ॥ ३२७॥

अ० यो०

॥ १०५ ॥

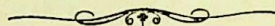
पंच कला मूल के माही ॥ जांके अमृत प्रलय हो जाही ॥
योगी जोडे वज्र कपाट ॥ बान्धे मूल त्रिवेणी घाट ३२८ ॥
दोहा ॥

मूल बन्ध परतापते हरे देह के रोग ॥
अलष पुरुष में लीन रहे लहे ब्रह्म रस भोग ॥

अथ जालन्धर मुद्रा ॥
चौपाई ॥

स्वास्तिक आसन बैठक कीजे ॥ ठोड़ी कण्ठ मूल में दोजे ॥
त्रिवेणी मध्य दृष्टी को राखे ॥ यांकु जलन्धर मुद्रा भाखे ३२९ ॥

इडा पिंगला बंध लगावे ॥ सकल पवन ऊरध को आवे ॥
 अ.यो. अमृत न पडे अग्निमें जाय ॥ पवन बंध को यही उपाय ३३०
 ॥१०६॥ जालंधर ऐसे कर भाई ॥ कंठ स्थान बंध लागाई ॥
 नीचे ग्रीवा हृदय धरे ॥ ऐसी विध जालंधर करे ॥ ३३१ ॥
 मूल अस्थान अंकोचन करे ॥ नाभी जाय पीठ सो अरे ॥
 गंग जमन चलती रहजाई ॥ उलटी पवन पल्लिमको आई ३३२
 वायु बध के ये है कूची ॥ अधो जाय के फेरे ऊची ॥
 या मुद्रा का फल है येही ॥ षोडस वरस की भासे देही ३३३



दोहा ॥

मूल बंध उडयान है जालंधर बंध तीन ॥
इनको हठ कर साधिये सोई सिद्ध परवीन ॥
महां श्रेष्ठ यह तीन बंध सकल सिद्धि को देइ ॥
चम्पा भोग या योग में साधे ते सिध होइ ॥

अथ विपरीत मुद्रा ॥

चौपाई ॥

दौ हाथ कमर तल करे ॥ चरण उठाय दौ ऊचा करे ॥
देही रहे गर्दन के पाण्य ॥ हाथ जोडि गोडा विच आण्य ३ ३ ४

अ. यो.

॥ १०८ ॥

नीचे माथो ऊपर पांउ ॥ कुंभक राखे सहज सुभाउ ॥

नैना भीतर है निज धाम ॥ विप्रित करणी या को नाम ३३५ ॥

चंद्र अमृत त्रिकटो अस्थाना ॥ नाभि सूर्य अग्नी परमाणा ॥

अमृत झरे अग्नि में परे ॥ ताते ही वृद्ध हो न मरे ॥ ३३६ ॥

बहु शास्त्र पठ पंडित होई ॥ या मुद्रा को लखे न कोई ॥

गुरु जनावे तो भल जाने ॥ चंदर के घर सूर्य आने ॥ ३३७

उलटा मार्ग ये विरला पावे ॥ चंदर सूर्य एक घर ल्यावे ॥

संस कार ते उलटे पवन ॥ तब क्रम क्रियाको मानेकवन ३३८

नेति नेति कर गावे बेद ॥ ताते कैसे पावे भेद ॥ [३३९]

चन्द्र घर सूर्य सूर्य घर चन्द्र ॥ स्थिर हो विंद अमर हो कंद ॥

अ० यो०

॥ १०९ ॥

विप्रत करणी श्रमृत पीवे ॥ तांते योगि युगो युग जीवे ॥
हाथको जोडि कांकसी करे ॥ तांके लगे सीस को धरे ३४० ॥
कपाल टेक अधर हो जाई ॥ नीचे सीसरु उपर जाई ॥
मस्तक अधार धरणि पर रहे ॥ कपालि आसन यांको कहे ॥
छे मास में पलटे वाल ॥ पहर सधे तो जीते काल ॥ ३४१ ॥

दोहा ॥

मन चन्दा हृदये वसे नाभी पवना सूर ॥
चम्पा मिल भेला रहे अनहद वाजे तूर ॥

अथ वज्रोली ॥

चौपाई ॥

अ.यो.

॥११०॥

अपनी इच्छा होइ त्यों रहे ॥ योग गहे ते लक्षण गहे ॥
वज्रोलीका करे अभ्यासा ॥ सकल सिद्धि है ताको दाता ३४२
सोला अंगुल नाल बनावे ॥ सने सने लिंग माहि चलावे ॥
तामें पवन फूक सों भरे ॥ यह मुद्रा गुरु गम से करे ॥३४३
ऐसे पवना मार गवावे ॥ वंक नाडि में जाय समावे ॥
नाडी सरल भई जव जाने ॥ वर्तन भरी दूध सो आने ३४४॥

अ० यो०

॥ १११ ॥

इन्द्री ले वर्तन सैं धरे ॥ उडयान बन्ध अंकोचन करे ॥
 लिंग द्वार में दूध चलावे ॥ यह मुद्रा वज्रालि कहावे ॥ ३४५ ॥
 राज योग का कठिन विचारा ॥ समझे बिना न लागे प्यारा ॥
 राज योग सबों पर छाजे ॥ जो साथे सो अधिक विराजे ॥ ३४६ ॥
 पती ब्रता होवे जो नारी ॥ तांसो रमे योग ब्रत धारी ॥ [३४७]
 उडयान बंध अंकोच लगावे ॥ तब उलटी बिंद अपुठो आवे ॥
 करणी कठन सुगम नहि भाई ॥ जो चूके तो मूल गवाई ॥
 दुर्लभ जानो योग संग्रामा ॥ शूर वीर कोई जीते कामा ॥ ३४८ ॥
 रज विरज का गुटका होई ॥ तांसो सिद्धि दूर नहि कोई ॥
 सदा प्रफुल्लित परमा नन्दा ॥ दिन दिन कला बधे ज्यों चन्दा ॥

अ० यो०

॥११२॥

जो अपनी रज राखे नारी ॥ वज्राली सिद्धि पावे सारी ३४९]
 स्त्री पुरुष होवे भल कोई ॥ विन्द राखें योगी सोई ॥ ३५० ॥
 दिसे संग रहे पुनि मुक्ता ॥ आठ प्रकार भोगको मुक्ता ॥
 पाप पुण्य कछु परसे नाहीं ॥ जैसे कमल रहे जल माहीं ३५१
 राज योग के लक्षण ऐसे ॥ महा पुरुष भाषत हैं जैसे ॥
 जांको दुःख व्यापे नहि कोई ॥ हृष शोक जांके नहि होई ३५२
 तांको क्षुधा तृषा न सतावे ॥ तांको निद्रा अलस नहि आवे ॥
 शीतउष्ण जांके नहि भाई ॥ जरा न व्यापे काल न खाई ३५३
 अग्न परे नहि डूवे पानी ॥ राज योगकी यहगति जानी [३५४]
 अजर अमर अति वज्र शरीरा ॥ षडग धार कछु बेध न तीरा ॥

अ० यो०

॥ ११३ ॥

जांको सकल देवही बूझे ॥ सकल जीव ब्रह्म मई सूझे ॥
 सर्व सिद्धि आज्ञा में जांके ॥ नव निधि रहे सुहाजर बांके ३५५
 संछा करे तहां चल जाई ॥ तीन लोक में अटक न काई ॥
 स्वर्ग जाय देवन में बैठे ॥ नागलोक पातालही पठे ३५६ ॥
 मृत्यु लोकमें आप समावे ॥ कबहु प्रगट होवत दिखावे ॥
 हृदय प्रकाश रहे दिन राती ॥ देखे ज्योति तेल ना वाती ३५७ ॥

दोहा ॥

वज्रोली मुद्रा कही विरला पावे कोई ॥
 राजयोग तांसी कही चम्पा सब सिधि होई ॥

अथ शक्ति चालन मुद्रा ॥

अ. यो.

चौपाई ॥

॥ ११४ ॥

कुण्डल लांगी कुण्डलि शक्ति ॥ भुजंग ईश्वरि सदा रहे सुप्ति॥
मुखिसुरोक्तयो ब्रह्म द्वारा ॥ योग विना नहि पावे पारा ३५८ ॥
विषै जीव जान नही पावे ॥ सर्पनि नागनि सब को खावे ॥
ताते सुत्ती बन्ध लगाई ॥ मोको जीत कौ योगी जाई ३५९
गंग जमन के बीच है जोई ॥ बाल रण्ड तपस्वनि होई ॥
छल बल कर्ताको वशकीजे ॥ विष्णु परं पद यह विध लीजे॥
ज्यों कुंजी सो खोले ताला ॥ भीतर पेट ले उजयाला ३६० ॥

अ० यो०

॥ ११५ ॥

ऐसे योगी मुद्रा करे ॥ कुंडलनो के वल को हरे ॥ ३६१ ॥

कुंडली छोड़ि सुधी हो जावे ॥ तब योगी मार्ग को पावे ॥

सकल पृथ्वी शेष अधारा ॥ ऐसे योगमे कुंडलि सारा ३६२ ॥

ताते चालनि मुद्रा गाउं ॥ गुरुप्रताप सें भेद वताऊं ॥

आधी पहर पाछली राती ॥ जागे सर्पनिहोय फलाती ३६३ ॥

वज्रासन कर पवन चलावे ॥ भस्त्रा कुंभक बहुरि कहावे ॥

रेचक पूरक करे चित लाई ॥ चार घडी तक एक सुभाई ३६४

ऐसे करत थकैलो जाने ॥ तब सूर्य पुर उदर में आने ॥

कुंभक कर सूधा हो जावे ॥ आसन मुद्रा नेहि छुडावे ३६५

चन्दर के घर रेचक करे ॥ सूर्यके घर पूरक भरे [३६६]

मध्य नाडीमे पवन चलावे ॥ शक्ति उलाटि शिव मन्द्रमें आवे ॥
 अ० यो० दौ सुर सम सुवुमणा जाने ॥ तबहि योगि या मुद्रा ठाने ॥
 ॥ ११६ ॥ कुण्डलीनी में पवन समावे ॥ शुद्ध होय मृत्तको पावे ॥ ३६७
 कुण्डलीनी को क्षोभ पजावे ॥ नाभी छोड गगन में आवे ॥
 योगी जन का पूरण काम ॥ शक्ती चालनि याको नाम ३६८

दोहा ॥

गुरुते मुद्रा पायके कह प्रकाशे नाहि ॥

छे मास लग साधिये जरा मृत्यु मिट जाहि ॥

अष्टासिद्धी योगमे साधे ते सिधि होइ ॥

सुराहोय लागारहे चम्पा पावे सोइ ॥

इति दशमुद्रासमाप्ता ॥

अथ साधन में विघ्न ॥

चौपाई ॥

पहले विघ्न देहका भाई ॥ जो मनको हम कहा सुनाई ॥

योगपंथ में जो कोइ आवे ॥ ताको मनसा बहुत सतावे ३६९

वैरी काम क्रोध वडभारी ॥ मान वमान लोभ की लहरी ॥

क्षुधा तृषा निद्रादहे ॥ इनसो योगी डरता रहे ॥ ३७० ॥

अ.यो.

॥११८॥

जिह्वा इन्द्रो दो निरधार ॥ सब इन्द्रन में यह सरदार ॥

इनको जीते योगी जोही ॥ तांके वस रहा वे देही ॥ ३७१ ॥

कायां जीत ध्यान चित लावे ॥ तांके सिद्धि विषे नहि आवे ॥

भांति भांति के लोभ दिखाई ॥ माया मनको देह विचलाई ३७२

दोहा ॥

आत्मा ज्योति प्रकास को कहुं साधन तत्व सार ॥

चम्पा तामें विघ्न है जांको कहुं विचार ॥

चौपाई ॥

ईश्वर जीवअंश अविनाशी ॥ चेतन अमल सहज सुखराशी ॥

सो माया वस गयो भुलाई ॥ बंधो किट मकंठकी न्यांई ३७३ ॥

अ० यो०

॥ १११ ॥

जड चेतन ग्रन्थी पडगई ॥ यद्यपि दृथा छूटन कठ नई ॥

जवते जीव भयो संसारी ॥ ग्रन्थ न छूटन हो सुखारी ३७४ ॥

श्रुति पुराण बहु कहे उपाई ॥ छूट न अधिक अधिक उरुझाई ॥

असंयोगईश जवकरहीं ॥ तवहु कदाचित सो निरुअरहीं ३७५

सात्विक सरधा धेनु सुहाई ॥ जो गुरुकृपा हृदे वस आई ॥

जपतप संयमनियम अपारा ॥ जो श्रुति कहे सोधर्म अचारा ३७६

यह तृण हरित चरे जोगाई ॥ भाव वत्स सिसु पान पन्हाई ॥

नोये निवृति पात्र विश्वासा ॥ निर्मल मन अहीर निजदासा ३७८

परम धर्म पय दूहो भाई ॥ अवटे अनल अकाम वनाई ॥

तोख मरुत तव क्षमाजुडावे ॥ धृति सम जामन दही जमावे ३७९

अ० यो०

॥१२०॥

मुदिता मथ विचार मथानी ॥ दम आधार सत्य सो वाणी ॥
तवमथि काठलेइ नवनीता ॥ विमल विरागमुभगसुपुनीता ३८०

दोहा ॥

योग अग्नि कर प्रगट तव कमं सुभा शुभ लाई ॥
बुद्धि सरावे ज्ञान घृत ममता मल जरि जाई ॥
तव विज्ञानिन रूपणी बुद्धि विदस घृत पाई ॥
चित्त दीपक भारि धरे समतादि अटि वनाई ॥
तीन अवस्था तीन गुण तेहि कृपास ते काढि ॥
तुल तुरीया सवारि पुनि वाती कहिउ सुगाढि ॥

सोरठा ॥

यहि विध लीजे दीप तेज राशि विज्ञान भव ॥

जातहि तासु समीप जरहि मदादिक शलभ सब ॥

चौपाई ॥

सोइ मस्मि इति धृति अपण्डा ॥ दीपशिखा सोइ परम प्रचण्डा ॥

आतम अनुभव सुखसुप्रकासा ॥ तवभवभूलभेद भ्रमनासा ३८१ ॥

प्रवल अविद्या कर परि वारा ॥ मोह आदि तम मिटे अपारा ॥

तव सोइ बुद्धि पाय उजवारा ॥ उग्रहवैठी ग्रन्थनिवारा ३८२ ॥

छोरत ग्रन्थि पाव जो कोई ॥ तव यह जीव कृतारथ होई ॥

छोरत ग्रन्थि जानि गुरु दाया ॥ विघ्न अनेक टरे तवमाया ३८३ ॥

अ० यो०

॥१२१॥

अ० यो०

॥१२२॥

ऋद्धि सिद्धि प्रेरे बहु भाई ॥ चम्पा मन को देइ अमाई ॥
 कल बल छल कर जाइ समीपा ॥ चंचल बात बुझावे दीपा ॥
 चम्पा यो जन गुरु के प्यारे ॥ इनको मनसे देइ विसारे [३८४]
 इन सिद्धि नमें भ्रमे जो कोई ॥ ताको मोक्ष कभी ना होई ३८५

अथ अष्ट सिद्धी ॥

दोहा ॥

अणिमम हिमा लविमा प्राप्ति प्रकासक जान ॥
 इशता वाशिता अवसिता अष्ट सिद्धि परमान ॥

चौपाई ॥

जाते देह रूप अणु होई ॥ कितहूं आवरे नहि कोई ॥
 अणिमा सिद्धि नाम यह जानो ॥ महां मोहनीमायामानो ३८६

अ० यो०

॥ १२३ ॥

जो जन करे महं विस्तार ॥ जहां तहां कलु वार न पार ॥
 महिमा नाम सिद्धि सो कहिये ॥ कवहुं ताको भूल न गहिये
 जो जे देह अति लघु करे ॥ मुष्टि न आवे दृष्टि न पडे [३८७]
 सोयह लघिमां सिद्धि कहावे ॥ योगीजनयाके निकटन आवे ३८८
 ये जे इन्द्रन भोगनि करे ॥ तहां तहां विषय न विस्तरे ॥
 तिन सब भोगनि जा करि लहिये ॥ प्राप्ति नाम सिद्धि सो कहिये
 एक ठौर बैठो रहे ॥ देखे सुने सकल की कहे ॥ [३८९]
 ताहि अगोचर रहे न कोई ॥ सो प्रकाशक सिद्धि कहाई [३९०]
 इन्द्रिय देह बुद्धि मन प्राण ॥ तिहों लोक जाके अस्थान ॥
 तीनको त्यों प्रेरे ज्यु जाने ॥ ताहि ईशिता सिद्धि वखाने ३९१

अ० यो०

॥ १२४ ॥

विषये सुख नीको ना गहे ॥ जाते अति आनन्दित रहे ॥
 वसिता नाम यह सिद्धि कहावे ॥ हरिकोभक्त निकटनहि आवे
 जो जो इच्छा मनमें ल्यावे ॥ सोसो सकलपलकमें पावे [३९२]
 नाम अवसिता सिद्धि है सोई ॥ योगी जन आदरे न कोई ॥
 चम्पा नाथ कहे मन माता ॥ इन सिद्धी से मन भरमाता ३९३ ॥
 मन भ्रम भये बुद्धि भ्रम होई ॥ बुद्धि भ्रमसे ऽज्ञानता होई ॥
 ज्ञान भ्रंशसे पशु सम होई ॥ पशु बुद्धि होय पशू गति होई ३९४ ॥
 सुन पशु गति के लक्षण जे ते ॥ खान पान विषयन मन देते ॥

दोहा ॥

अष्टा दश अरु सिद्धि हैं योग विघ्न वीधार ॥
 चम्पा नाथ तू समझले गहे सो मूढ गवार ॥

चौपाई ॥

श्र. यो.

॥ १२५ ॥

योग मे संछा जो जन करे ॥ तांको साधन कैसे शरे ॥
योग साधन साधन सरदार ॥ संछा कैसे करे गवार ॥ ३९५ ॥
छे दर्शन में है विषाद ॥ मतवादिनमें है विवाद ॥
तीर्थ व्रत तप दान उपासा ॥ इन सें ज्ञान रहे ऊदासा ॥ ३९६ ॥
साधन विना ज्ञान है तैसो ॥ नून विना बहु व्यंजन जैसो ॥
योग विना कोइ साधन नाहीं ॥ चम्पा मनको क्यों भरमाई ॥ ३९७ ॥

दोहा ॥

सनकादिक सों योग है सप्त ऋषिन परमाण ॥
चौरासी सिद्ध साधके गये मोक्ष पद धाम ॥
नौ नाथ सों पाइके वामन वीर वखान ॥

अ.यो.

॥१२६॥

चौ सठ योगनि गायके आठ भैरव को जान ॥

इन सिद्धन को दास जग चम्पा नाथ गुलाम ॥

तिन के योग प्रसाद से आतम साधन जान ॥

चौपाई ॥

गीता में भगवान प्रकासा ॥ अर्जुन परती योग उपासा ॥

भागवतमें ऊधव सो कही ॥ विना योग मोक्ष है नहीं ३९८॥

पातंजल में योग है सार ॥ मनु स्मृती में कीयो पुकार ॥

अथर्वण मंडुक पुनिषद में योग ॥ ब्रह्म वैवर्त पुराणमेहोग ३१९

विवेक चुडा मनि शंकराचार्य ॥ ब्रह्मज्ञानिको योग है कार्य ॥

योग शिखा उपनीषदगावे ॥ ब्रह्मांड पुराण योग वतलावे ४००

कुर्म पुराण योगवल भाषे ॥ विष्णु धर्मोत्तर में है साखे ॥

अ० यो०

॥ १२७ ॥

गोरक्ष शतक योग सधायो ॥ हठप्रदीपका योगवतायो ॥ १० ॥ १ ॥
 गोरख गीता योग है सार ॥ इन्द्र वहसपति कियो विचार ॥
 योग बीजमें शिव जी गाई ॥ पार्वती को कह समझाई ४० २ ॥
 खेचरि पटल को साधन गायो ॥ योग सिद्धि को यहि उपायो ॥
 गोरख पद्धति साधन घाम ॥ योगी साध लहे मन काम ४० ३ ॥
 याज्ञवल्क्य ऋषिगार्गी उपासा ॥ योगशास्त्रको बहुत प्रकासा ॥
 महिषी मातंग योगी जान ॥ दक्षस्मृती में कियो बखान ४० ४ ॥
 आदित्य पुराण योगकी शाख ॥ गरुड पुराणमें भी भाख ॥
 कठवल्ली में योग प्रकार ॥ श्रुति और सांख्य सूत्र है सार ४० ५ ॥
 सुरेशाचार्य याग भण्डार ॥ नदिकेश्वर पुराण पुकार ॥
 भाष्य में व्यासन योग बतायो ॥ अत्रि संहितामें मन भायो ४० ६ ॥

अ० यो०
॥१२८॥

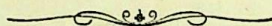
अन्यस्मृति योग का मान ॥ अमनस्क है योगको ध्यान ॥
अव्यय स्मृति है योगको सार ॥ रेमन मूरखले विचार ४०७ ॥
साम वेदमें ध्यान बखान ॥ यजुर वेद श्वेतास्वर जान ॥
अमृत विन्दू उपनिषद योग ॥ संव्रत संहिता में होग ४०८ ॥
अरु उपनिषद थर्वण वेद ॥ ध्यान विन्दु पुनी किसु देश ॥
यह सब ग्रन्थ योगके शोध ॥ चम्पा मन में भयो प्रबोध ४०९

दोहा ॥

सब साधन में सार है योगा भ्यास पुकार ॥
श्रुति स्मृति अरु प्राणको चम्पा यही विचार ॥
इती श्री इंद्रेश्वरनिवासि श्रीचंपानाथकृत ॥
अष्टांग योगः समाप्तः ॥

ॐ ॥

अथ ज्ञानयोगसार ॥



दोहा ॥

वंदि सच्चिदा नन्द गुरु केवल अलष सहाय ॥

सार योग अष्टांग को योगी जन सुख दाय ॥ १ ॥

चम्पा नाथहि योगि जन समझि सकल उपकार ॥

सुलभ देख दोहा सहित मुद्रित कियो सुधार ॥ २ ॥

है अनंत व्यापक सकल चिन्मय सारो धाम ॥

अनु भवते ठहगत जो चम्पा करें प्रणाम ॥ ३ ॥

ज्ञा० सा०

॥ १ ॥

ज्ञा.सा.

॥ २ ॥

हों बंध्यो छूटो कवे यह निश्चय है जाहि ॥
 नहि मूरख नहि अति चतुर चम्पा विद्या ताहि ॥ ४ ॥
 जौ लों नहि जगदीसको होय कृपाको लेस ॥
 तौ लों सत गुरुना मिले ना चम्पा उप देस ॥ ५ ॥
 मोह सिंधुके तरण को सत गुरु कहे उपाव ॥
 ज्यों मलाह तें पाइये चम्पा तरण को नाव ॥ ६ ॥
 योग महौषधि तें मिटे हृदय रोग संसार ॥
 कोहू काको जन्म है चम्पा कियो विचार ॥ ७ ॥
 संत समागम योग को नहि तत्व उप देश ॥
 एक दिवस वसिये नहीं चम्पा असुरन देश ॥ ८ ॥

ज्ञा० सा०

॥ ३ ॥

संगत साधुन की भली जो उपदेसे नाहि ॥

सहज वचन उनके सुने चम्प सिखावन माहि ॥ ९ ॥

रीतो पूरण होतहै मरिवो जीवन भाइ ॥

संपतिहुं विपती सि लगे चम्पा मूरख पाइ ॥ १० ॥

शरण जाहि तव कौन के दुखि अज्ञानि लोग ॥

ज्ञानिन को चित होय जो चम्पा आपन भोग ॥ ११ ॥

भले उदासी सिष्यको जो उपदेस निधान ॥

वहै ज्ञान वह अर्थ है चम्पा आत्म ज्ञान ॥ १२ ॥

रीति सिखावन पालिये पूरवली यह नाम ॥

समझन को इक चाहिये चम्पा बुद्धि सुधाम ॥ १३ ॥

ज्ञानसा.

॥ ४ ॥

नाहि वेद नाहि गुरुहुं लषि यत ईश्वर रूप ॥

आपुहि आप में जानियें चम्पा मती अनूप ॥ १४ ॥

सकल कलारुं मिटति हैं विनु अभ्यास विशेष ॥

ज्ञान कला यह नाम जो चम्पा बढती देख ॥ १५ ॥

कंठ माल ज्यों कंठकी भूले पावत नाहि ॥

भ्रम मिटे त्यों पाइये चम्पा आपुहि माहि ॥ १६ ॥

निज स्वरूप जाने नहीं बडे अभागी लोग ॥

विषय सुखन में रमरहैं चम्पा गुड विष होग ॥ १७ ॥

विषे विषे जिय जानि कै जोहै बंधन चित्त ॥

सो नर खर पहचानिये चम्पा निश्चे मित्त ॥ १८ ॥

ज्ञा० सा०

५ ॥

या कहुं संकल्पते नर बूढत दुख धार ॥

मिटे सकल संकल्पके चम्पा आनन्द पार १९ ॥

जैसे सुपने की घड़ी वरस सोक भ्रम जाल ॥

तैसे जागत होतहै चम्पा माया जाल ॥ २० ॥

जामै राग न द्वेषहै ऐसी सुमति प्रकास ॥

साक्षी लो जग देखिये चम्पा जीवन तास ॥ २१ ॥

हेय उपा देय छाडिवो जो जाने कर ज्ञान ॥

धरित न आगे चित्त को चम्पा जीवन जान ॥ २२ ॥

देह मिटेते नाम रह हृदा काश मिट जात ॥

मिट्टी मानिके आतमा चम्पा क्यों पछतात ॥ २३ ॥

ज्ञा०सा०

॥ ६ ॥

जैसे घट मटके मिटे वहु अखंड आकाश ॥

तैसें देहादिक मिटे चम्पा कौन विनाश ॥ २४ ॥

कोऊ काहु न होत है कोऊ काहु न मर्त ॥

सोहं जगत् को रूप धरि चम्पा ब्रह्म विवर्त ॥ २५ ॥

व्यापक है आकाशलों अविनासी सुख धाम ॥

सूक्ष्म शुद्ध जो आत्मा चम्पा करों प्रणाम ॥ २६ ॥

एक सकल आनंद है आदि अंत मध हीन ॥

है नाहीं सो रहत है चम्पा हो सुख लीन ॥ २७ ॥

भीख मांगले ठीकरा घर घर जाय चंडार ॥

जो आज्ञानी नाम को चम्पा जीवन क्षार ॥ २८ ॥

ज्ञा० सा०

॥ ७ ॥

व्याधि विपत्ति विष एक है और मही के बीच ॥
 दुख जो अपने देह को चम्पा अज्ञता नीच ॥ २९ ॥
 मनके मिटतहि दुख मिटे उपजत जो जंजार ॥
 प्राणवासना रोक ले चम्पा चित्त विचार ॥ ३० ॥
 निज विकल्पते होत है यह संसार असार ॥
 मन विकल्प के मिटतहीं चम्पा हो जरि छार ॥ ३१ ॥
 सांप जानि के चित्त को नर नारिन डय रात ॥
 जैसें त्योहीं आपसों चम्पा चित्त विलात ॥ ३२ ॥
 ऐसी माया जगत की मिटे होत सुख दान ॥
 लख्यो न जात सुभाव सो चम्पा मिटे सुजान ॥ ३३ ॥

ज्ञा० सा०

॥ ८ ॥

अचरज माया चित्र है मोहति है संसार ॥

लखे न आपय आपहीं चम्पा करो विचार ॥ ३४ ॥

जो कछू यह देखिये सो नाही है साच ॥

मृग तृष्णा को अंबु ज्यों चम्पा भूत को नाच ॥ ३५ ॥

अपने मन के मोहते उपज्यो है संसार ॥

दुख दाई वैतालको चम्पा ब्रह्म विचार ॥ ३६ ॥

जो अव नाही देखियत अंत न देख्यो जाइ ॥

सो अविनाशी आतमा चम्पा सदा सहाइ ॥ ३७ ॥

प्रति विवत सब वस्तु में बडे मुकर मन माहि ॥

जैसें तर वर तीर के चम्पा नदी दिखाहि ॥ ३८ ॥

ज्ञा० सा०

॥ ९ ॥

जन्म मरण चित फरकियो मीटत आतमा जान ॥

ज्यों रसरी में सांप भ्रम चम्पा तूं पहि चान ॥ ३९ ॥

भोग वासना जोरते याकि नेक ना छूट ॥

भोग वासना मिटतहीं चम्पा जात सब टूट ॥ ४० ॥

परं ब्रह्मते आप सो उपजत है मन अंग ॥

थिर समुद्र तें होय ज्यों चम्पा कोटि तरंग ॥ ४१ ॥

मनहीं तें यह मानियें उप जावत जग ख्याल ॥

जग झूठो सांचो लगत चम्पा इंद्र सुजाल ॥ ४२ ॥

ज्यों वालहिं वेताल भ्रम मरिवो लों दुख देत ॥

अज्ञहिं सांचो होय ल्यों चम्पा जग दुख देत ॥ ४३ ॥

ज्ञा०सा०

॥१०॥

जेही सोनो देख्यो नहि कंकन देख्यो होइ ॥

ताहि न सोनो मानई चम्पा अज्ञहै सोइ ॥ ४४ ॥

पुर मंदर थावर वसे यह जो करे संचार ॥

जो जो यह यह देखिये चम्पा देखन हार ॥ ४५ ॥

दुखमय जगहै अज्ञको ज्ञानी को सुख रूप ॥

भुवन अधेरो अधरही चम्पा ज्योति अनूप ॥ ४६ ॥

जैसे शुद्ध आकास में बादल घुमडि बिलात ॥

तैसे आत्म के विषे चम्पा जग मित जात ॥ ४७ ॥

किरण सूर्य एक है जेहि जानि हैं संत ॥

जीवरु ब्रह्म एकहै चम्पा वात है तंत ॥ ४८ ॥

ज्ञा०सा०

॥११॥

ज्यों सूतहि पट होतहै देखो चित्त विचार ॥
 ल्यों आत्मा जग होतहै चम्पा तत्व निहार ॥ ४९ ॥
 शुद्ध ब्रह्म समुद्र सों जग तरंग की धात ॥
 ताही में उपजत रहे चम्पा ताहि समात ॥ ५० ॥
 फेन बुदबुदा लीहरी कनपालो ज्यों ताय ॥
 जगत ब्रह्म न्यारो नतो चम्पा ब्रह्म है सोय ॥ ५१ ॥
 आत्मा में सें निकस जग आत्मा माहि समात ॥
 कुंभलहरि ज्यों कुंभ लो चम्प कनक सविलात ॥ ५२ ॥
 ब्रह्म न जाने जगलसै जाने जगत न होय ॥
 रज्जु न जाने अहिलसे चम्पा अहि न होय ॥ ५३ ॥

ज्ञा० सा०

॥१२॥

आत्मा भूले जग लसै आत्मा है जग जोनि ॥
रज्जु भूल सों आहि लगै चम्पा आहि न होनि ॥ ५४ ॥
सुपनो जाग्रत झूठ है जाग्रत सुपनो नाहि ॥
जीवन झूठो मरणहै चम्पा मरते नाहि ॥ ५५ ॥
सांचो नाहि न झूठ है परम भरम जग जानि ॥
अनु भवतें कछु जानियें चम्पा अनु भव मानि ॥ ५६ ॥
सर्वासा तृण दहनको योग अग्नि मन जान ॥
यही ज्ञान वखानिये चम्प समाधी मान ॥ ५७ ॥
जग चैतन्य सरूप सब ऐसो जाको ध्यान ॥
ऐसे रहे सो ब्रह्म है चम्पा आनन्द मान ॥ ५८ ॥

ज्ञा०सा०

॥१३॥

पाय परम पद ना तजै पूरण चंद्र समान ॥
सो योगीश्वर ब्रह्म है चम्पा मोक्ष निदान ॥ ५९ ॥
ब्रह्मोपनिषद तत्व को जो चिंतित है चित्त ॥
ना वह दुखी न वह सुखी चम्पा मोक्ष है नित्त ॥ ६० ॥
जरत पहाडहिं ज्यो तजै खग मृग रहै नरंच ॥
चम्पा योगी लोक मै पाप नही पर पंच ॥ ६१ ॥
साधु रुठावतऽसाधको गही असाधू रीत ॥
परषनको गुण ज्ञान के चम्पा को परतीत ॥ ६२ ॥
रज्जुहुके पहिचानतें मिटत कांपि वो नाहि ॥
मोह मिटे हू मोह के चम्पा है आप माहि ॥ ६३ ॥

ज्ञा०सा०

॥१४॥

फटिक नहि ज्यों फटिक सों प्रति विवन को रंग ॥
 लगे न ताको रंचफल चम्पा ज्ञान के संग ॥ ६४ ॥
 काह वाहिरे करत है चित्त अंत में होय ॥
 असो योगी कथत है चम्पा ज्ञानी लोय ॥ ६५ ॥
 ठहराने अद्वैत के चित को मिटत पसार ॥
 सुपनो जैसो जगत है चम्प कर्म मत सार ॥ ६६ ॥
 आजुहि मरिवो होय किन कै कल्पनके अंत ॥
 सोनो मिल्यो जु कीच में चंपा असो संत ॥ ६७ ॥
 काशी में ज्ञानी मरो कै चंडाल घर माहि ॥
 जहां तहां वह मुक्त है चंपा संशय नाहि ॥ ६८ ॥

ज्ञा० सा०

॥१५॥

मेरु डंड पृथिवी खुरी मुंदरि छेद अकास ॥
 तीन लोक तृण जानले चम्पा जो है निरास ॥ ६९ ॥
 भीतर सुनो वाहीर हुं अवर में घट होय ॥
 भीतर बाहिर भरि रह्यो चम्पा ज्यों घट तोय ॥ ७० ॥
 चाहनी चहही छांडिके अंतर ही में युक्त ॥
 फिर सुषुप्त दशा हि में चम्पा जीवन मुक्त ॥ ७१ ॥
 विन संशय विन गाठ को जीवन मुक्त सुभाय ॥
 विनही बुझाय बुझीरहै चम्पा चित ठहराय ॥ ७२ ॥
 अहंकारकी वासना खोलजु डारे एह ॥
 जीवन मुक्त कहा वही चंपा है गुण येह ॥ ७३ ॥

ज्ञा० सा०

॥१६॥

मन तै जगको छाडिकै सीतल बुद्धि विलास ॥
सो योगेश्वर मुक्त है चंपा तुल्य अकास ॥ ७४ ॥
करो समाधी नित करो जोहै यग सों युक्त ॥
मन ते आसा सब मिटे चंपा सो है मुक्त ॥ ७५ ॥
देहहीं आत्मा मानिवो यह बंधन मिट मोक्ष ॥
नित्य मुक्त जो आतमा चंपा मोक्ष न दोक्ष ॥ ७६ ॥
जगत नहीं यह ज्ञानतें राखो मनको धोय ॥
जो उपजे यह धोयवो चंपा मोक्ष सुख होय ॥ ७७ ॥
मोक्ष नहीं वैकुण्ठमें नहि पताल भुव कोख ॥
सकल कामना के मिटे चंपा चित यह मोख ॥ ७८ ॥

ज्ञा० सा०

॥ १७ ॥

चित्त अनंत अनंद है निर्विकल्प के रूप ॥
 को बंधो को छूटि है चंपा नहीं अनूप ॥ ७९ ॥
 मनही के फैलावतें आत्मा बांध्यो जाय ॥
 मनके मिटतहि आपसो चम्पा मुक्ति ठहराय ॥ ८० ॥
 आपुहि उपजी चेतना जो संकल्प सुभाउ ॥
 आपुनहुं दौरत फिरे चम्पा ही ठहराउ ॥ ८१ ॥
 सर्व व्यापी आतमा जो सब शक्ति निधान ॥
 याते भई जु भिन्नता चंपा तरंग समान ॥ ८२ ॥
 निज संकल्पतें होतहै ताहीतें मिट जात ॥
 अग्नि लपट ज्यों पवन तें चंपा पवन समात ॥ ८३ ॥

ज्ञा.सा.

॥१८॥

विन देखे मन झूठ है बेही काज दिखात ॥
सुप्रो कैसो मरण है चंपा देख विलात ॥ ८४ ॥
तत्त्व ज्ञान जान्यों नही नहि आपुहि पहि चान ॥
मति अवस्तु में वस्तु है चम्पा एहि तु जान ॥ ८५ ॥
यह सोहुं मेरो जो यह इतनोंही मन जान ॥
इन वातन के मिटतहीं चम्पा मेटनि मान ॥ ८६ ॥
यह लीजे यह छाडिये संकल्पनकी खानि ॥
येही मनको रूप है चम्पा और न मानि ॥ ८७ ॥
मन कर्ता यह जगत को मनहि पुरुष पहि चान ॥
तनकी करनी कछु नही चम्पा को मन मान ॥ ८८ ॥

ज्ञा०सा०

॥१९॥

मन के रहे तें जग रहै भले बुरे सब भाव ॥
 छिन्न भये मन छिन्न जग चम्पा करो उपाव ॥ ८९ ॥
 वासना सों बंधत है मन मुक्त वासना हीन ॥
 निर्वासनता लेहु तुम चम्पा विवेक प्रवीन ॥ ९० ॥
 घटा चंद्र को ज्यों ठुके मैलो करत पछाड़ ॥
 ऐसे आसा नीचनी चम्पा पुरुष दवाड़ ॥ ९१ ॥
 ज्ञान अग्निमें होमतही तीन लोक तृण पात ॥
 भीतर चित ये आपसो चम्पा चित मिट जात ॥ ९२ ॥
 चेतन रूप जो आतमा जगते भिन्न न कोइ ॥
 यह लीजे यह छाड़िये चम्पा भेद न कोइ ॥ ९३ ॥

ज्ञा० सा०

॥२०॥

लेवे लायक छाडिके ताजि वेलायक छाडि ॥
रहिये सब कछु छाडिके चम्पा चितहुं गाडि ॥ १४ ॥
जागत मन दौरत फिरे सुपने में ठहरात ॥
मन सुश्रुतिमें मूढ मति चम्पा ज्ञान बिलात ॥ १५ ॥
अग्नि संगतें लोह ज्यों अग्नि रूप होजाइ ॥
सोंही आतमा संगतें चम्पा इंद्रिय सोइ ॥ १६ ॥
ज्यों मेढत जल मलिनता कितक आपनो खोइ ॥
तत्त्व ज्ञानतें मेढि मन चम्पा आतम होइ ॥ १७ ॥
चित्त जगत पहिचानिये बंधन चित्त विचार ॥
चित्त हलावत देहकों चम्पा तरू वयार ॥ १८ ॥

ज्ञा० सा०

॥२१॥

हाथ निपीडिए हाथसों दांतन दांत चवाय ॥

अंगन अंग निपीडके चम्पा मनको ताय ॥ ९९ ॥

सके न मनको जीतके कहै ज्ञानकी वात ॥

मूरख ऐसे लोकमें चम्पा क्यों न लजात ॥ १०० ॥

एक देव मनजीतिये जाते हो सब काज ॥

मन जीते विन कछु नही चंपा जप तप साज ॥ १०१ ॥

सब उद्योग निछाडिकै मनको जीतन ठान ॥

तीन लोकको जीतवो चंपा तिनका जान ॥ १०२ ॥

सत संगति अति समुझिवो और वासना भंग ॥

प्राण पवन का रोकिवो चंपा मन के अंग ॥ १०३ ॥

ज्ञा०सा०

॥२२॥

पूरण जांको मन रहै अमृत मयि जगताहि ॥

चाम बिछाई ताहि क्षिति चम्पा पनहियां जाहि १०४

नाहीं में वह ब्रह्महुं जाते होत बंधाइ ॥

सवे ब्रह्म पाध्यानतें चम्पा बंधन जाइ ॥ १०५ ॥

दुई एकता जातहै जोपै बिडारे चित्त ॥

परं ब्रह्म ठहरात है चम्पा सुद्ध तुं तित्त ॥ १०६ ॥

जा मन है विन चित्तको वह चैतन्य स्वरूप ॥

ताको पर घट होत है चम्पा आनन्द रूप ॥ १०७ ॥

वुरे रूखको बीजमन तांको जारन हार ॥

योग अग्नि यह जान ये चम्पा आत्म विचार ॥१०८॥

ज्ञा०सा०

॥२१॥

जैसे चित्र लतानिको नहीं हलावत पौन ॥

ज्ञान मुकुर की सुमति को चम्पा डुलवत कौन ॥ १०९

योग ज्ञान में रहतु है योगी लोग कहंत ॥

चम्पा ज्यों रस दूधको पीवन हार लहंत ॥ ११० ॥

श्रुति विचारते आतमा जान्यो यही बनाय ॥

चाहत तीनों देवता चम्पा दया अघाय ॥ १११ ॥

कहुं कहां सो जगत है जाके चित्त विचार ॥

तांको झूठो लगत है चम्पा जग व्यवहार ॥ ११२ ॥

जाकी मिटत अज्ञानता सबे ब्रह्म इक ध्यान ॥

चम्पा मिटत है वासना मरु सथल जल ज्ञान ॥ ११३

ज्ञा० सा०

॥२४॥

आगो पाछो ना गिने चितमें चित विलोय ॥

सवे वस्तुकी चाहना चम्पा वासना सोय ॥ ११४ ॥

सकल वासना त्यागिके प्राण अपान समोय ॥

मिटे चित्तकी चेतना चम्पा भावे सोय ॥ ११५ ॥

साधु संगति अरु उपनिषद है मनको विसराम ॥

पावेगा कछु दिननि में चंपा ज्ञान सुख धाम ॥ ११६ ॥

साधु संग विवहार तें और ज्ञान के जोर ॥

देह बिनासी लखतही चंपा वासना छोर ॥ ११७ ॥

सूधी उलटी भावनी जिनके अनु संधान ॥

होत काम विष अमृत तै चंपाऽमृत विष मान ११८ ॥

ज्ञा० सा०

॥२५॥

दिस दिस जो तुम फिरत हो धरि सुपनेकी देह ॥
 कहो कहां वह देह जो चंपा सम ज्यो गेह ॥ ११९
 सोवतहो जा सरीरसों सुख शय्या पर शाम ॥
 घूमत फीरो सुपनमें चम्पा कहां वह धाम ॥ १२० ॥
 याबुधि डारो देह हूं सर्व नास किन होय ॥
 या बुधिको लूवे नहीं चंपा चंडार की जोय ॥ १२१ ॥
 एक ब्रह्म यह चिंतिये रहो सुखी तुम साधु ॥
 तांते व्हे है आपुहीं चंपा ऽहंको बाधु ॥ १२२ ॥
 सबही एके समुझि कै व्हे है सीरी चित्त ॥
 रहिहों विमल अकाश लों चंपा श्रीर कर्तीत ॥ १२३ ॥

अंतर सीतलता लगे सब जग सीतल होइ ॥

अंतर जरे जु जग जरत चंपा मइ जग जोइ १२४ ॥

शुद्ध निरंजन अनंतहु बोध प्रकृतिसो पार ॥

चलत फिरत इह देहको चंपा ज्योतन न्यार ॥ १२५ ॥

मन बुधि इंद्रिय आदि सब दैस चेतन विलास ॥

है नाहिमें अचरज है चम्पा ज्ञान प्रकास ॥ १२६ ॥

थिर बुधिहुं मैं विपत्ति में संपत्ति में जग मित ॥

है नाही मैं नारहों चम्पा हुं निह चित ॥ १२७ ॥

सुंदरता विन चाहको विन इच्छा विन काम ॥

परमा नन्द स्वरूप हों चम्पा चिन्मय धाम ॥ १२८ ॥

ज्ञा.सा.

॥२६॥

ज्ञा० सा०

॥२७॥

चित्ते सकले भूत है चित्ते तीनो भौन ॥

अवजानी होहूं चिते चम्पा भेद है कौन ॥ १२९ ॥

सब में हूं सब के परे रह्यौ अकाशलों आम ॥

जो जो है सो सो नहीं चम्पा नहि कलु नाम १३० ॥

मो अनन्त चित सिंधु मे अचरज जीव तरंग ॥

हुन सत खेलत जाति मिल चम्प सुभावके संग १३१

सो अनन्त चित सिंधु में जग तरंग किन होय ॥

चम्पा दढती है नही सोन घटे जिय जोय ॥ १३२ ॥

उपजतुहै मो ज्ञानते मोमे जगत विलात ॥

चिदानन्द हो परम पद चम्पा प्रगटत जात ॥१३३॥

ज्ञा० सा०

॥२८॥

स्थावर जंगम बीच जो नित्य मुक्त चित रूप ॥
 तांको मो मै करतहूं चम्पा नमो एक रूप ॥ १३४ ॥
 बाहिर झूठो हों लखो भीतर क्रोध न काम ॥
 बाहिर करता भीतर नही चम्पा जग में धाम ॥ १३५ ॥
 मनतें आसा सब तजों नेह वासना संग ॥
 खवरलेहुं सब बाहरी चम्प लेखहुं यह अंग ॥ १३६ ॥
 पूरण दृष्टि गहै रहूं देहों धोयको डारि ॥
 जीवन मुक्ति सुखी रहों चम्पा खेलों विचारि ॥ १३७ ॥
 भीतर बाहिर जड अजड बंधौ छूटो मन धाम ॥
 अंतर त्यागि बाहिर ना चम्पा जगमें काम ॥ १३८ ॥

ज्ञा० सा०

॥२९॥

एक शब्द तौ ज्ञानहौ यह ध्यानहै आगि ॥

राग जारि कै द्वैत मन चंपा हो सुख लागि ॥ १३९ ॥

दृढ बंध्यो है कामना यह सरीर है देह ॥

हौ ज्ञानी या खड्ड ते चम्पा कर सुख लेह ॥ १४० ॥

है अखंड तूं जगत में अनात्मा में रुचि नाखि ॥

एक ठौर ठहराय मन चंपा सत चित राखि ॥ १४१ ॥

जाग्रत सुप्त सुषुप्ति विन सदा जु तेरो रूप ॥

चिन्मय सुद सुखी रहो चम्पा सिख बन भूप ॥ १४२ ॥

लेवे लायक होहिजनि लेन हार जनि होहि

सब है वेको डारिकै चम्पा सो है सोहि ॥ १४३ ॥

ज्ञा०सा०

॥३०॥

मनहीं सों मन काटि कै संकल्पकनिसकरूप ॥

आपुहि आपुनि मैं रहौ चम्पा वात है अल्प ॥१४४॥

को तेरोहै देह है जड गुंगो है जान ॥

जांके काज दुखी सुखी चम्पा होत सुजान ॥ १४५ ॥

मांस हाड लोहू कहां कहां जो चिन्मय ऐन ॥

जानतहों तनमैसु क्यों चम्पा आत्म चितैन ॥ १४६ ॥

इतने मेंहि पाइअत परमात्मादे वेष ॥

जो यह जानो देहको चम्पा काठ में मेष ॥ १४७ ॥

जो सत ब्रह्म सो विसरियो यह अचरज किन लेत ॥

असत अविद्या नाम जो चम्पा दीखाइ देत ॥ १४८ ॥

ज्ञा०सा०

॥११॥

संवै ब्रह्म यह भावना जानि मुक्तिकी दानि ॥

यही अविद्या भेद बुधि चम्पा मिथ्या मानि ॥ १४९ ॥

न्यारो करिकै देहको चित्तमें करि विश्राम ॥

सब तिनका सोलागिहैं चम्पा ब्रह्महौ नाम ॥ १५० ॥

जेहि जानत सो जानिकै भीतर कीजे चित्त ॥

तातें आत्म प्रकाशको चम्पा लखि है मित्त ॥ १५१ ॥

शब्द रूप रस गंधको जो करि है पहिचान ॥

ता आत्मा देवे सही चम्पा ब्रह्म तु जान ॥ १५२ ॥

जामें रहत सबै कछू जाकरि उपजत जात ॥

ता आत्माको जान तूं चम्पा आनन्द गात ॥ १५३ ॥

ज्ञा० सा०

॥३२॥

सो सो जुगति न डारिदे जो जो जान्यो जात ॥
 सोहं सोहं ध्यान करि चम्पा चिन्मय वात ॥ १५४ ॥
 ज्ञान ज्ञेयते नाहिजुदो ज्ञेय ज्ञान इक पोत ॥
 यांते और हि कलु नही चम्पा भेद न होत ॥ १५५ ॥
 जो जो ये कलु करत है ब्रह्म विष्णु रुद्रादि ॥
 चिन्मयते हि हों करो चम्पा वात यह आदि ॥ १५६ ॥
 हों सब जग यह विश्व हूं हों परमात्मा वानि ॥
 भूत न भावी होत नहि चम्पा और न जानि ॥ १५७ ॥
 चिन्मय एकहि ब्रह्म है और अखंड विज्ञान ॥
 अचल बहुत धन सकल यह चम्पा कीजै ध्यान १५८

ज्ञा. सा.

॥३३॥

मैं नहीं नहीं और हैं ब्रह्म निरंतर आहि ॥
 सौवै आनन्द रूप है चम्पा समुझो याहि ॥ १५९ ॥
 गहि वेलायक सब कछु गाहक है सब कोइ ॥
 योगी जानत तत्वको चम्पा पूजा सोइ ॥ १६० ॥
 तनमन इंद्रिय आदि दै यामें आपुहि होय ॥
 हौ मेरो अभि मान यह चंपा मलिनता सोय ॥ १६१ ॥
 चिदा कास परब्रह्म है यह निश्चय मन मेलु ॥
 मिटत जीवकी जीवता चंपा दीप गतेलु ॥ १६२ ॥
 छांड़ि शुद्धता मोहते ब्राह्मण होत चंडार ॥
 ज्यो त्यों ही अज्ञानतें चंपा जीव करतार ॥ १६३ ॥

ज्ञा.सा.

॥३४॥

अम संकल्पते अज्ञही देत दिखाई भूत ॥

देखत झूठी देह को चम्पा जीवको सूत ॥ १६४ ॥

माटी को गज देखि शिशु खेलत वारंवार ॥

आतम मे तन देखि कै चम्पा मूढ गवार ॥ १६५ ॥

सांपजु जान्यों चित्र को सों नाही भय होत ॥

जीव ब्रह्म पहि चान विन चम्पा सुख दुख देत १६६ ॥

माला महि उपजे अही माला माहि समात ॥

आतमहींमें भेद उठि चम्पा आत्म विलात ॥ १६७ ॥

जैसें एक सुवर्णतें बहु भूषण होइ जात ॥

स्यों उपाधितें आतमा चम्पा अनक दिखात ॥ १६८ ॥

ज्ञा०सा०

॥३५॥

ज्यों सरीरमें अंग बहु ज्यों मृत्तिका वीकार ॥
 त्यों एक बहु देखियत चम्पा भरम निहार ॥ १६९ ॥
 मणि दर्पण घृत तोय में एक मुख वहि देख ॥
 बुधि प्रति विम्बित आतमा चम्पा भ्रम बहु लेख १७०
 ज्यों अंबर में लो लगे धूर धुवां धुर वानि ॥
 माया मोह अज्ञानतें आतम चम्पा मानि ॥ १७१ ॥
 ज्यों लोहा हुड़ जात है अग्नि संगतें आगि ॥
 तन मन आतम होत्यों चम्पा आतम लागि ॥ १७२ ॥
 अनदेख्यो ज्यों देखियत राहु चंद्र के संग ॥
 सोंहीदीसै आतमा चम्पा इंद्रिय रंग ॥ १७३ ॥

ज्ञा० सा०

॥३६॥

मिलि आत्मा जड होत है जडे आत्मा होय ॥

पाइ परम पर संगतें चम्पा पावक तोय ॥ १७४ ॥

जड की संगति पाइके चेतन हूं जड होत ॥

ज्यों अगाध जल में मिले चम्पा अग्नि न जोत १७५॥

तिलनि तेल गुड ऊष में काठ अग्नि गिरि लोह ॥

घिऊ दूध में जतन तें चम्पा आत्मा जोह ॥ १७६ ॥

विना छेद के फटिक में ज्यों आकास दिखात ॥

परमेश्वर चिद् रूप ल्यों चम्पा सब विख्यात ॥ १७७॥

रत्न कुंभ में दीप ज्यों वाहिर मध्य प्रकास ॥

तन मन में ल्योंहीं लसे चम्पा आत्म विलास ॥ १७८॥

ज्ञा० सा०

॥३७॥

ज्यों सूरय प्रति विम्बकी अधिक मुकर में ज्योति ॥
 निर्मल मति में ज्योति त्यों चम्पा आतम होती ॥ १७१ ॥
 ज्यों रसरी में अहिलसे त्योंही जग प्रति भास ॥
 जामे सोही आतमा चम्पा सदा प्रकास ॥ १८० ॥
 निर्विकल्प चिन्मय सदा है विनु अंत अनादि ॥
 परमात्मा आकास सम चम्पा जीके आदि ॥ १८१ ॥
 स्वयं ज्योति व्यापक सदा निर्विकार चित रूप ॥
 आत्मा शुद्ध स्वभाव है चम्पा सूरय धूप ॥ १८२ ॥
 आत्मा अनु भव रूप है व्यापक सब आधार ॥
 अग्नि तत् ज्यों एक है चम्पा ब्रह्म विचार ॥ १८३ ॥

ज्ञा०सा०

॥३८॥

ज्ञेय विना ज्यों ज्ञान है परमात्मा परकास ॥

जो भीतर बाहिर रह्यो चम्पा कला निवास ॥ १८४ ॥

आत्मा चिन्मय सुद्ध जो घटती बढती हीन ॥

भली बुरी दिश काल जग चम्पा रहै विलीन १८५ ॥

ज्यों ब्रह्मांड में पवन है मुक्तन में ज्यों सूत ॥

सोईहै परमात्मा चम्पा ये सब भूत ॥ १८६ ॥

सोइ भासत भानुमें है चैतन्य विलास ॥

सो चीटी के पेट में चंपा है परकास ॥ १८७ ॥

एक नहीं नाहि दूसरो रहउ सकल अवगाहि ॥

नाहि बंधन नाहि मोख है चंपा ब्रह्म निज आहि १८८

ज्ञा०सा०

॥१९॥

ब्रह्म भुवन चित ब्रह्म है ब्रह्म सकल ये भूत ॥

ब्रह्म हि भाई ब्रह्म हों चंपा मीतरु पूत ॥ १८९ ॥

ज्ञान ज्ञेय को जानिवो यह बंधन पहि चान ॥

याको छुटवो मुक्त है चंपा ब्रह्म ठीक मान ॥१९०॥

जाहै भासत आतमा केवल ज्ञात दिखात ॥

गहि बेलायक गाहको चंपा झूठिहै वात ॥ १९१ ॥

जहां तहां चित देखिये यह सब चिन्मय होइ ॥

तु चित है हों वि चित्ततै चंपा यह सब लोइ ॥१९२॥

ज्ञान ज्ञेय की एकता सम परम सुख होइ ॥

जाके ठहरे मन मिटत चंपा यह पद जोइ ॥ १९३ ॥

ज्ञा०सा०

॥ ४० ॥

ज्ञेय ज्ञान एक भय लहै है परम सुख लोइ ॥
माया बंधन मिटतहीं चंपा मोक्ष है सोइ ॥ १९४ ॥
हैनाहीके बीचहै शुद्ध ठौर कर नेहु ॥
भीतर बाहिर जगनको चम्पा छोडन लेहु ॥ १९५ ॥
जड चेतन के बीच जो तत्व परमारथ सार ॥
ताहीको गहिवो जुहै चंपा ज्ञान अपार ॥ १९६ ॥
द्रष्टा दृश्य मिलाप जो सो बंधन पहिचान ॥
द्रष्टा बंध्यों जु दृश्यसों चंपा मिटे सुजान ॥ १९७ ॥
द्रष्टा दर्शन दृश्यको सहित वासना नाखि ॥
दर्शन आदि जो आतमा चंपा चित तहं राखि १९८ ॥

ज्ञा० सा०

॥४१॥

हैनाही ये पक्ष द्वै ता मध आत्मा नीत ॥
 सब ज्योतिनकी ज्योति जो चंपा कोहै चीत ॥ १९९
 निंद आदिके जागत में अंत जु उपजत भाव ॥
 सोभाव भावे यहै चम्पा आनन्द पाव ॥ २०० ॥
 मिटत यहां संकल्प सब सील किसी ठहरान ॥
 जागन सुप्रदोनो नही चम्पा सुख पति मान २०१ ॥
 एक हि जडता छाडिकै जोहै आतम सार ॥
 विन मन तन मय होय तां चम्पा तूं दुख पार ॥ २०२ ॥
 सत चित अनन्त अकासहै सो परमेश्वर रूप ॥
 माटी ज्यों भांडेनमें चम्पा सूरज धूप ॥ २०३ ॥

ज्ञा.सा.

॥४२॥

जाको पार अबार नहि जल विज्ञान विलास ॥

चित्त समुद्र एक यह चंपा आत्म प्रकास ॥ २०४ ॥

सब दिश भरू यो अनन्त है ज्यों आकास अनूप ॥

एकवस्तु सब जगत चित चम्पां डबुधि जल रूप २०५ ॥

है अखंडता नित्यता अव्यापकता जान ॥

ब्रह्म व्योम में भेद नाह चम्पा चेतन मान ॥ २०६ ॥

घना नन्द सूधा जलधि विन तरंग गंभीर ॥

एक माधुरी रस जहां चम्पा है विन तीर ॥ २०७ ॥

निश्चय सब यह ब्रह्म है फैल रह्यो सब ठार ॥

नहि अखंडको खंडिये चम्पा होय न और ॥ २०८ ॥

ज्ञा०सा०

॥४३॥

जवहीं जान ब्रह्म यह है अखंड मन माहि ॥
 चम्पा तरि संसारको परमेश्वर व्है जाहि ॥ २०९ ॥
 सोवै ब्रह्म या ध्यानतें ब्रह्म हिं होत प्रमान ॥
 कोन हो है अमृत मय चम्पा अमृत पान २१० ॥
 निश्चय यह सब पाइये जो तूं व्है है भव्य ॥
 बहुत कहों विन काजको चम्पा भस्महि हव्य ॥ २११ ॥
 जाने हूं तें तत्व के अनुभव होत संवारि ॥
 नाम लिये तें कतक को चंप न निर्मल बारि २१२ ॥
 वासुदेव होहीं अच्छ परं ब्रह्म की ठोर ॥
 यह निश्चय तें छूटि है चंपा बंध न और ॥ २१३ ॥

ज्ञानसा०

॥४४॥

नेति नेति पुनि नेति तें रहै जु पद ठहराय ॥
 नाहीं साकिये दूर करि चंपा सोहं सुखपाय ॥ २१४ ॥
 एक निरंतर सर्व में ब्रह्म आप कों मानि ॥
 क्यों अखंडकों खंडिये चंपा ध्यात ध्येय मानि ॥ २१५ ॥
 सोहुं चिन्मय समुझिवो यही ध्यान पहिचान ॥
 भले ध्यान को भूलिवो चंपा समाधि बखानि ॥ २१६ ॥
 ब्रह्म रूप मन किय सर अहंकार विन धार ॥
 संप्रज्ञात समाधि यह चम्पा अधिक अपार ॥ २१७ ॥
 मिलो समुद्र सब रवि तपो वहि प्रलयको वात ॥
 ताकी घटती है नही चम्पा चित्त विलात ॥ २१८ ॥

ज्ञा० सा०

॥४५॥

जो चित सवही भूतकी उदय अस्त की साखि ॥

पूर्णा घन अनन्द अमृत चम्पा चित नितराखि २१९ ॥

थावर जंगम सब कलू मन तें देख्यो जात ॥

मन के उनमनि भावतें चम्पा दुजो नहि वात २२० ॥

निश्चंचल आनन्द सुखि तामें जग ठहरात ॥

नित चंचल जो आतमा चम्पा चित दिखात ॥ २२१ ॥

पहले अपनी कांचुरी जानत है निज देह ॥

छोड अही जव कांचुरी चम्पा नेकुन नेह ॥ २२२ ॥

ज्यों योगी को ना गिने दोष गुणनकी शुद्ध ॥

भली वुरी यामे नहीं चम्पा वालक बुद्ध ॥ २२३ ॥

सा.सा.

॥४६॥

ज्यों कंचन अग्नी जरे मैल रहै नहि कोइ ॥

योग अग्नि के जरतहिं चम्पा रोष न होइ ॥ २२४ ॥

पुत्तरि जैसें खंभमें ज्यों जल माहि तरंग ॥

सदारहत है ब्रह्म में चम्पा नग के संग ॥ २२५ ॥

है अरु नाहि है लेहरी ज्यों निहचल जल माहि ॥

तैसेह। जग ब्रह्म में चम्पा है अरु नाहि ॥ २२६ ॥



सवैया ॥

ज्ञा०सा० योगको अपार सार ज्ञानको भंडार यह तत्वको विभाग कर
॥४७॥ आत्म पद पायो है । चम्पा नाथ मन में विभाग कर बुद्धि सो
अविद्या सिंहार के आत्मा दिखायो है ॥ १ ॥

चापाई ॥

चार वेद में देखो भाई ॥ चम्पा आत्मा देव बताई ॥
जोलों रहि है भूमि अकास ॥ तौलों योग सार पर कास ॥१॥
इति श्री इंद्रेश्वर निवासि चम्पा नाथ कृत योग ज्ञान सार संपूर्ण

यो०वा०

॥ १ ॥

ओं गौरी शंकराभ्यां नमः ॥
श्री गौरीनन्दनाय नमः ॥ अथ योग सिद्धान्त
वार्त्तिक लिख्यते ॥

श्री मच्छी मन्महो पाध्याय श्री १०८ योगि राज
चम्पा नाथ प्रणीत ॥

जिससे इस जगत का जन्म स्थिति प्रलय होता है, वही ब्रह्म
माननीय है । परंच अपादान कारण प्रकृति है । ईश्वर जीव

यो० वा०

॥ २ ॥

प्रकृति अनादिहैं, ब्रह्म जीव दोनो व्याप्य व्यापक भावसे सखा
 रूप और अनादिहैं जीव कर्म फल भोगताहै । ईश्वर तो भोगा
 ताहै । जीव से ईश्वर ईश्वर से जीव है दोनों में प्रकृति भिन्न
 स्वरूपी है तीनों अनादिहैं । प्रकृति जीव और परमात्मा तीनों
 का जन्म कभी नहि होता सत्व शुद्ध रज मध्य तम अर्थात्
 जड़ता तीनों वस्तु मिल कर प्रकृति हुई ॥ उस से महा तत्व
 और बुद्धि हुई ॥ उससे अहंकार हुवा । उससे पंच तन्मात्रा
 क्या सूक्ष्म भूत हुवे चौबीस और पच्चीस वां पुरुष वे परमेश्वरहै
 इस से प्रकृति अविकारिणी और महा तत्व अहंकार तथा पंच
 सूक्ष्म भूत प्रकृति का कार्य और इन्द्रियां मन तथा स्थूल भूतों

यो० वा०

॥ ३ ॥

का कारण है, पुरुष न किसीका प्रकृति अपादान कारण है और न किसी का कार्य है और जगतके तीन कारण हैं एक निमित्त दूसरा अपादान तीसरा साधारण । निमित्त कारण उसको कहते हैं जिसके बनाने से कुछ बने आप स्वयं बने नहीं दूसरे को प्रकारान्तरसे बना देवे । और अपादान उसको कहते हैं ॥ जिसके बिना कुछ न बने ॥ वही अवस्थान्तर रूप होके बने ॥ और बिगड़े भी ॥ तीसरे साधारण उसे कहते हैं जो बनाने में साधन और साधारण निमित्त हो ॥ निमित्त कारण दो प्रकारका है । एक सब सृष्टि को कारण से बनाने धारण और प्रलय करने तथा सब की व्यवस्था रखने वाला । मुख्य निमित्त कारण परमात्मा जी ॥

योगवा०

॥ ४ ॥

दूसरे परमात्मा जी की सृष्टि में षट् पदार्थों को लेकर अनेक विध कार्यान्तर में बनाने वाला । साधारण निमित्त कारण जीव अपादान कारण प्रकृति परमाणु जिसको सब संसारके बनाने की सामग्री कहते हैं । वह जड़ होनेसे आप से आप वन न विगड़ सकती है । किन्तु दूसरे के बनाने से वन और विगाड़ने से विगड़ती है । कहीं कहीं जड़ के निमित्त से जड़भी वनता विगड़ता है ॥ अपादान कारण के सदृश कार्य में गुण होते हैं ॥ व्यापक परमेश्वर ने अपने भीतर व्याप्य प्रकृति और परमाणु कारणसे स्थूल जगत को बना कर बाहिर स्थूल रूप से आप उसी में व्यापक होके साक्षी भूत आनन्द मय हो रहे हैं । और परमात्मा प्रभु ने

यो. वा.

॥ ५ ॥

इच्छा की कि मैं सब जगत बना कर प्रसिद्ध हो जाऊँ ॥ जब जगत उत्पन्न होता है । तभी जीवों को विचार ज्ञान ध्यान उपदेश श्रवण में से परमात्मा जी प्रसिद्ध हो बहुत स्थूल पदार्थों के साथ वर्तमान होते हैं ॥ जब प्रलय होता है तब परमात्माजी को मुक्त जीवों को छोड़े कोई नहीं जानता है । यह सब जगत सृष्टि के पहिले प्रलय से अंधकार से आवृत आच्छादित था और प्रलय आरंभ के पश्चात् भी वैसा ही होता है उस समय न किसी से जानने न तर्क मिलाने और न प्रसिद्ध चिन्हों से युक्त जानने के योग्य होता है । और यथावत् उपलब्ध है और जगतके कारण यह है । परमेश्वर प्रकृति और काल आकाश

यो. पा.

॥ ६ ॥

तथा जीवो के अनादिहोने से उत्पत्ति होती है । जेकर इन में से एक न हो तो जगत भी न हो । उस परमात्मा और प्रकृति से आकाश आकाशके पीछे वायु वायुके पीछे अग्नि अग्निके पीछे जल जल के पीछे पृथ्वी पृथ्वी से ओषधी ओषधी से अन्न अन्न से वीर्य वीर्य से पुरुष उत्पन्न है । भांती ॥ कहीं आकाश से छंदोग में अग्न्यादि से तैत्तिरीयमे जल से वेदों में हिरण्य गर्भ आदि से । मीमांसा में कर्म से वैशेषिक में काल न्यायमें परमाणु योग मे पुरुषार्थ सांख्य में प्रकृति और वेदान्तमें ब्रह्म से सृष्टि मानी है । सब सत्य है ॥ आकाश मे अवकाश चाहिये । मीमांसा में ऐसा कोईभी कार्य जगत मे नहीं है । कि

यो० वा०

॥ ७ ॥

जिस्में कर्म चेष्टा न की जावे । वैशेषिक में समय लगे बिना
 बनेही नहीं न्याय में अपादान कारण नहो तो बने ही नहीं ॥
 योग में विद्या विचार ज्ञान से बनता है । सांख्य में तत्वों का
 मेल चाहिये । और वेदास्तमें बनाने वाला चाहिये ॥ इस लिये
 यह सृष्टि छे कारणों से बनी है । जब सृष्टिका समय आता है
 तब परमात्मा जो उन सूक्ष्म पदार्थोंको इकठा करते हैं । उसकी
 प्रथम अवस्था में जो परम सूक्ष्म प्रकृति रूप कारण से कुछ
 स्थूल होता है उसका नाम अहंकार है । अहंकार से भिन्न भिन्न
 पांच सूक्ष्म भूत श्रोत्र त्वचा नेत्र जिह्वा घ्राण पांच कर्म इन्द्रिया
 हैं ॥ और ग्यारवां मन है । कुछ स्थूल उत्पन्न होता है ॥ और

यो० वा०

८ ॥

उन पांच तन्मात्रा से अनेक स्थूल भूत जिनको हम देखते हैं
 उत्पन्न होते हैं उन में से अनेक प्रकारकी औषधियां वृक्ष आदि
 उनसे अन्न अन्न से वीर्य वीर्य से शरीर होता है ॥ परंच आदि
 सृष्टि मैथुनीसे नहीं होती ॥ क्योंकि जब स्त्री पुरुष के शरीर पर
 मात्माजी बनाकर उस में जीवोंका संयोग कर देते हैं तदनन्तर
 मैथुनी सृष्टि चलती है ॥ देखो शरीर में किस प्रकार की ज्ञान
 पूर्वक सृष्टि रची है ॥ जिसको विद्वान् देखके आश्चर्य मानते हैं ॥
 भीतर हाडियों का जोड़ ॥ नाडा का बन्धन ॥ मांस के लेपन
 चमड़े का ठकन पिल्हा फेफड़ा पत्ता कलाका स्थापन जीव
 का संयोग शिरोरूप मूल रचना रोम नखादिक का स्थापन ।

यो० वा०

॥ ९ ॥

आंख की अति सूक्ष्म गति । शिरकार वत् ग्रथन इन्द्रियों के मार्ग का प्रकाशन । जीवके जागृत । स्वप्न सुषुप्ति अवस्था को भोगने के लिये अस्थान विशेषों का निर्माण । सब धातु का विभाग करना कला कौशलादि स्थापनादि ॥ अद्भुत सृष्टि को विना परमेश्वरके कौनकर सक्ता है । इसके विना अनेक प्रकार के रत्न धातु से जडित भूमि विविध वट वृक्षादि के बीजों में अतीव सूक्ष्म रचना असंख्य हरित श्वेत कृष्ण चित्र मध्य रूपों से युक्त पत्र मिष्ट क्षार कटुक कषाय तिक्त प्रफ्लादि विविध रस सुगन्धादि युक्त पत्र पुष्प फल अन्न कन्द मूलादिक रचना अनेकानेक क्रीडो भूगोल सूर्य चन्द्रादिलोक निर्माण साधारण भ्रमण

यो.वा.

॥ १० ॥

नियमों में रखना आदि परमात्मा जी के बिना कौन कर सका है ॥ अन्तरीय रचना देहाण्ड में मुक्त जीवों का रास्ता वहत्तर हजार ७२००० नाडी उन में मुख्य नाडी दश है । इडा पिंगला सुषुम्णा गंधारी हस्तिजिह्वा पुष्पा यशस्विनी अलंबुषा कुहू शशिनी यह दश मुख्य हैं नासाके वाम पुट में इडा नाडी है और दक्षिण में पिंगला है मध्य देश में सुषुम्णा है ॥ और वाम नेत्रमें गन्धारी है और दक्षिण नेत्रमें हस्तिजिह्वा है और दक्षिण कर्ण में पुष्पाकी स्थिति है वाम कर्ण में यशस्विनीका वास है मुखमें अलंबुषाका वास है लिंग देश में कुहूका वास है और मूला धार में शशिनीका वास है मनुष्यो के लिंग वा गुदा में

यो० वा०

॥११॥

जो देहका मध्य भाग सीवनी है तिस से नव अंगुल ऊपर नाभी के अर्द्ध भागमें कन्द का स्थान है, सो कन्द चार अंगुल चौड़ा है, तैसे कुकुट के अण्डा समान उसकी आकृति और रंग है, चारतर्फ से त्वचा और कफादिसें वेष्टित है, तिस कन्द के मध्य देश में सुषुम्णा आदिकका मूल है, पृष्ठ भाग में मेरु डण्ड द्वारा ब्रह्म रंध्र पर्यंत गई है, सुषुम्णा कंदके मध्य भाग से उठ कर आधार चक्र में आई है, आधारसे स्वाधिष्ठान को आई है, तहां से मणि पूरकको आवे है, तिसते ऊर्ध्व अनाहद चक्र में जावे है, तहां से कण्ठ चक्रमें आवे है, तहांसे सुषुम्णा के पश्चिम मार्ग से ग्रीवा के पृष्ठ भाग स्थित जो मेरु डण्ड है

यो. वा.

॥ १२ ॥

तिस्के द्वारा ब्रह्म रंध्र में जावे है, पूर्व मार्ग भू मध्य देश में जो
 आज्ञा चक्र है, तिस द्वारा ब्रह्म रंध्र को जावे है, विधि पूर्वक
 प्राणायाम के अभ्यास से नाडी चक्रके शुद्ध होने से सुषुम्णाके
 मुख भेदनसे प्राण सुखसेहि दशम द्वारमें आवेश करे है, इस
 देहमें वायु तो अनंजास ४९ है तिनमें दश प्रधान हैं, प्राण अपान
 समान उदान व्यान नाग कूर्म कृकर देवदत्त धनंजय हृदयस्थानमें
 प्राण गुदा में अपान नाभि मण्डल में समान कण्ठ में उदान
 और व्यान सर्व शरीर में व्यापक है, और नागादि जो पांच हैं,
 डकार हिडकी जंभाई क्षुधा तृषा उष्णिलन आदि काममें आते
 हैं, और इस देहमें छे चक्र हैं, गुदा और लिंगके मध्य देश में

यो० वा०

॥१३॥

वकार से सकार तक चार अक्षरों के चार दल युक्त अग्नि के
 वर्ण समान आधार चक्र है, दूसरा लिंग देश के उपर गुह्य देश में
 वकार से लकार तक छे अक्षरों से छे दलों करके युक्त सूर्य के
 वर्ण तुल्य स्वाधिष्ठान चक्र है, तीसरा नाभि देश में उकार से
 लेकर फकार तक दश अक्षरों करके अंकित भया दश दल कर
 युक्त रक्त वर्ण मणिपूर चक्र है, चौथा हृदय देश में ककार से
 ठकार पर्यन्त द्वादश अक्षरों से अंकित भया द्वादश दल स्वर्ण के
 रंग समान अनाहद चक्र है, पांचवा कण्ठ देश में अकार से लेकर
 अः पर्यन्त षोडश दल सहित चन्द्रमा के वर्ण समान विशुद्ध चक्र
 है, छठवां भृकुटी में हकार और क्षकार दो अक्षर और दो दल

यो.वा.

॥१४॥

सहित रक्त वर्ण आज्ञा चक्र है, सातवां दश में द्वारमें सुभ्रिता
 नन्द ज्योति स्वरूप सहस्र दल से युक्त शुद्ध स्फटिक समान
 ब्रह्म रन्ध्र चक्र है, सो प्रथम चक्रमें गणेश दूसरे में ब्रह्मा तीसरे
 से विष्णु चतुर्थ में महादेव पांच में जीवात्मा षष्ठ में गुरु जी
 सप्तमे व्यापक ब्रह्म इसी प्रकार शक्ति और वाहन सम जलेना
 दश नाडी दश वायु षट् चक्र का संशोधन करके पश्चात् अष्ट
 कुम्भक का अभ्यास होना चाहिये अष्ट कुम्भकये हैं ॥ सूर्य भेदन
 उज्जायी सित्कारी शीतली भस्त्रिका आमरी मूर्छा छावनी साधन
 वाहरवायुको पहले दक्षिण नासा पुटसे सने २ अभ्यन्तर आक
 र्षण करके शिखासे नख पर्यन्त सर्व शरीर में यथा शक्ति कुम्भक

यो० वा०

॥ १५ ॥

करे । पीछे वाम नासा पुट से सने २ रेचना करे इसका नाम सूर्य भेदन है, मुख को वन्द करके जिस प्रकार सहित शब्द के कण्ठ से हृदय पर्यंत प्राण वायु स्पर्श करे तैसे पूर्वोक्त प्रकार से दक्षिण नासा आकर्षण करे यश्चात् यथाशक्ति कुंभक करे इसका नाम उज्जायी है, सत्कार पूर्वक मुखसे वायु का आकर्षण करे फेर यथा शक्ति कुंभक करे नासा द्वारा रेचक करे इसका नाम सितकारी है, काक चंचु की न्याई जिह्वा को मुख से किंचित् बाहर निकाले बाह्य स्थित वायु को अभ्यन्तर आकर्षण करे तथा पूर्वोक्त प्रकारसे यथा शक्ति कुंभक करे पीछे नासा पुटों से सने २ रेचक करे यह सितली है, मुख को वन्द करके जैसे लोहार

यो०वा०

॥१६॥

भस्त्राको चलावताहै, तैसेहि अपने शरीर में स्थित जो प्राण वायु है, एक नासा द्वार से शीघ्रहि पूरक करे फेर रेचक करे फेर शीघ्रहि पूरक करे जिस पुटसे रेचक करे तिससेहि पूरककरे इस प्रकार बारंबार रेचक करतेहुवे जिस कालमें परिश्रम होवे तो दक्षिण नासा पुट से पूरक करे फेर पूर्ववत् हि रेचक पूरक करे इसका नाम भस्त्रिकाहै ॥ जैसे भ्रमरका शब्द होवे तैसेहि गुंजार सहित वाम नासा पुटसे वायुको पूरक करे पश्चात् यथा शक्ति कुंभक करे जैसे भ्रमरीका शब्द होवे है । तैसेहि मध्यम गुंजार सहित दक्षिण नासा पुटसे सने २ रेचककरे इसका नाम भ्रामरी है ॥ पूरक करने से पश्चात् वक्ष्यमाण जालन्धर बंधको

यो० वा०

॥१७॥

कण्ठ से दृढ स्थापन करे पश्चात् यथा शक्ति कुंभक करे, प्राण वायुको नासा पुटोंसे सने २ रेचककरे ॥ इसका नाम सूर्छा है, बाह्य स्थित वायु को उदर पर्यन्त पूरक करने से अगाध जल विषय ऊपर तरेहै । सो ध्यावनी कुंभक है ॥

आगे प्राणायाम की विधि ॥

इडा जो वाम नासा पुटकी नाडी है तिस द्वारा षोडश मात्रा करके प्राणवायुको पूरककरे और चौसठ मात्रा पर्यन्त तिसका उदरमें कुंभककरे तथा वत्तीस मात्रा करके पिंगला जो दक्षिण नासा पुट की नाडी है, तिस द्वारा रेचक करे ॥ न तो शीघ्र-

यो. वा.

१८॥

तासे न तो विलम्बता जानुकी हस्तसे प्रदक्षिणा देकरके पश्चात्
 एक चुटकी देवे । इतने काल की मात्रा संज्ञा है । अष्ट प्रहरमें
 चार वार प्राणायामका अभ्यास करे प्रातःकाल मध्याह्न काल
 सायं काल अर्धरात्रि इन चारों कालों में अस्सी २ प्राणायाम
 करने चाहिये ॥ जिस कालविषे प्राण वायु विलय होवे तो मन
 का भी विलय होवे है, और जिस काल विषे मनका विलय
 होता है तो प्राणवायु का भी विलय होवे है ॥ तिन दोनों में
 भी प्राण वायु का षडंग योगके अभ्यास करके निरोध करणा
 असाध्य है, और मन का निरोध करना तो गुरु उक्त छे चक्रा
 दिकों से धारणा रूपी युक्ति से निमेष मात्रासाध्य है, तथा

यो०वा०

॥१९॥

प्राण के निरोधनसे शीघ्रताभी नहि करणा किन्तु सने सने हि निरोधन करणा, प्रथम इडा द्वार से प्राणवायु को पूरक रोके पश्चात् यथा शक्ति कुंभक करके अनन्तर इडा द्वार से रेचक करे, इस प्रकार से चन्द्रमा रूपी इडा और सूर्य रूपी पिंगला द्वारा प्राणायामके अभ्यास करने से तीन मासके अभ्यंतर योगी की नाडीशुद्धि होती है ॥ विधि पूर्वक प्राणायामको अभ्यास कर नाडी चक्र के शुद्ध होने से सुषुम्णा का मुख भेद करके प्राण मुख से हि दश में द्वार में प्रवेश करेहै । कुण्डलिनी सुषुम्णाको अपन शरीर से वेष्टन करके और साढे तीन बल देकर अपनी पुच्छको मुखसे सम्यक् प्रकार ग्रहण करके नाभिके अधोभागमें

यो० वा०

॥२०॥

सर्वदाहि कुण्डलिनी शक्ति स्थित हो रही है। इस कारणसे पुरुष के प्राण सुषुम्णा में प्रवेश नहि करते हैं। याते प्राण को दश में द्वार में ले जानेकी इच्छावान् साधक युक्ति पूर्वक तिस स्थल में प्राणों का निरोधकरे कि तिस को तहांसे चलाय मान करना योग्य है, सो तिस अस्थान बंध पूर्वक प्राणायाम करनेसे होवे है, बन्ध उडियान जालन्धर मूल बन्ध इस भेदसे तीन प्रकार केहैं, प्राण के रेचक पूरक उदरको पछिम की तर्फ आकर्षण करके नाभि देशको किंचित उर्ध्वको आकर्षण करे यह मृत्यु के जीतने वाला उडियान बन्ध है। कण्ठ का संकोचन करके ठोड़ी को हृदय के समीप दृढ करके लगावे तो जरावस्थाको

यो० वा०

॥२१॥

दूर करता है । ता जलन्धर बन्ध है, सिद्धासन पूर्वक वाम पाव
की एडी से गुदा और लिंग के मध्य भाग में जो योनि है ।
तिरको पीडन करके प्राण वायुके ऊर्ध्व आकर्षण द्वारा गुदाको
अंकोच करे इसका नाम मूल बन्ध है ॥ उडियान बन्ध तो प्राण
के रोकन काल विषे करणा और जालन्धर बन्ध प्राणके कुंभक
समयमे करणा और मूल बन्ध प्राणके पूरक काल विषे करणा
इस प्रकारसे तीन बन्ध युक्त प्राणायाम करनेसेहि कुण्डलिनी
शक्ति का बोध होवे है, उडियान बन्ध मूल बन्ध करनेसे अपान
वायु का ऊर्ध्व आकर्षण होता है । जालन्धर करने से प्राण वायु
का नीचे आकर्षण होवे है । तो प्राण अपानकी एकता होनेसे

यो.वा.

॥२२॥

जठरानल अत्यन्त प्रदीप्त होता है । पश्चात् तिस अग्निकी उष्णता करके व्याकुल भई कुण्डलिनी सुषुम्णाके मुखका परित्याग करके ताडनकरी हुई जैसे नागिनी ऋजु होकरके विलमें प्रवेश करे है तैसेहि सो कुण्डलिनी नाडी सरल होकर सुषुम्णामें प्रवेश करके ऊर्ध्व ब्रह्म रन्ध्र में प्रवेश करे है । तैसे हि सो कुण्डलिनी नाडी सरल होकर सुषुम्णा में प्रवेश करे है । कि ऊर्ध्व ब्रह्मरन्ध्र को गमन करे है । पश्चात् सुषुम्णा के द्वार खुले होने से प्राण भी तिसके पीछे प्रवेश करके ब्रह्म रन्ध्र को गमन करे है । तिसके साथ योगी का सूक्ष्म शरीर भी जावे है । तथा आधार चक्र के समस्थित त्रिकोण अग्नि कुण्ड से मूल बन्ध करके

यो०वा०

॥ २२ ॥

स्थान को प्राप्त भया अग्नि भी जावे है । तिस तेज करके योगी को गमना गमन की प्राप्ति होवे है । प्राणायाम के अभ्यास से धारणामे मन की योग्यता होवे है । फिर प्रत्याहार करणा यह कहे हैं ॥ प्रिय वा अप्रिय पदार्थ जो २ श्रोत्र इन्द्रियसे श्रवण किये हैं । तिन सबको आत्मा रूप जानकर योगी श्रोत्र इंद्रिय का प्रत्याहार करे । और कोमल वा कठिन जो जो त्वचा इन्द्रियसे स्पर्श करे है ॥ तिन सबको भी आत्मा रूप जानकर योगी त्वचा इन्द्रियका प्रत्याहार करे ॥ तथा स्वरूप या कुरूप जो २ नेत्र इन्द्रिय से देखे तिनकोभी योगी आत्मा रूप जान कर नेत्र इन्द्रिय का प्रत्याहार करे । स्वाद या अस्वाद जो २

यो०वा०

॥२४॥

जिह्वा से रस ले है ॥ तिस २ को भी आत्म रूप जान कर
 जिह्वा इन्द्रिय का प्रत्याहार करे सुगन्ध वा दुर्गन्ध जो नासा
 से सूंघे है तिस तिसको भी आत्मारूप जानकर घ्राणइन्द्रियका
 प्रत्याहार करे इस देह में २५ भूमि स्थान हैं सो इनमें चित्तका
 प्रत्याहार करना श्रेष्ठ है दोषादके अंगूठा दो गुल्फ दो जंघाके
 मध्य देश दो चित्त के मूलदेश दो जानुके मध्यदेश दो ऊरुके मध्य
 देश एक गुदाका मूलदेश एक देहका मध्यदेश एक लिंगका मूल
 एक नाभि देश एक हृदय एक कण्ठ एक तालु एक नासिका
 दो नेत्र मण्डल एक भ्रुवों का मध्य देश एक ललाट एक ब्रह्म
 रन्ध्र इन स्थानोंमें प्राण वायु एक दूसरेमें चठाना उसी प्रकार

यो० वा०

॥२५॥

उतारणा मन और इन्द्रियों का जो स्वस्वविषयों से निग्रह कर
 णा है सोहि परमतप है । पुरुषके इन्द्रियहि स्वर्ग और नरक हैं
 शरीर तो रथ है और परमात्मा रूप मध्यमें अधिष्ठाता पुरुष है
 और चक्षु आदि इन्द्रिय इस रथके अश्व हैं, परमात्मा सारथि
 है, कर्म मार्ग द्वारा मोक्ष धामको पहुँचाने वाले अध्यात्म आधि
 भौतिक आधि दैविक इस प्रकार से धारणा करने के देश तीन
 प्रकारके हैं, तिन में हृदयचक्र नाभिचक्र कण्ठकूप आधार
 चक्र जिह्वाग्र भाग नासिकाग्रभाग लम्बिका तालु भ्रुवों का
 मध्य देश तो अध्यात्मिक है ॥ और सूर्य मण्डल चन्द्र मण्डल
 ध्रुवादिक नक्षत्र दीपक तो आधिदैविक है, तथा मणि रत्न

यो. वा.

१२६॥

उत्तम वृक्ष की शाखा शालिग्रामादिक देवताओं की मूर्ति तो आधि भौतिक है, तो इन में से कहीं भी चित्तकी धारणा करे तो लाभ है, और भूमि जल तेज वायु आकाश इन पांच महा भूतो में पांच प्रकार की धारणा होवे है, तिन में पादसे लेकर जानु पर्यन्त पृथ्वी तत्वका स्थान है, और जानु से लेकर गुदा द्वार पर्यन्त जल तत्व का स्थान है, और गुदा से लेकर हृदय देश तक अग्नि तत्व है, हृदय से लेकर भ्रुवोंके मध्य देश तक वायु तत्व है, भ्रुवों के मध्य से लेकर ब्रह्म रन्ध्र तक आकाश तत्व है, जिस काल में योगाभ्यास करने से धूम सूर्य अग्नि वायु खद्योत स्फटिक मणि चन्द्रमा इत्यादिक रूपों की हृदयमें उप

यो.वा.

॥२७॥

लब्धि होवे है, तो पश्चात् समाधि द्वारा शीघ्रहि ब्रह्मका साक्षात्
 कार होवे है, फेर चराचर सर्व जगत को दीर्घकाल का स्वप्न
 या चित्तका विभ्रम जाने वा प्रलय कालकी न्याईं सब तरफ
 से शून्यवत् प्रसुप्त भया देखे इस प्रकारकी धारणा करनेसे भी
 चित्त की स्थिरता होवे है, अथवा सर्व शक्तिमान् प्रकृति का
 नियन्ता जो ईश्वर है, तिसका आगधन करने से भी चित्तकी
 स्थिरता होवे है, सो ईश्वर जो है, अविद्या अस्मिता राग द्वेष
 अभिनिवेश यह जो पांच प्रकार के क्लेश हैं, और शुभा शुभ
 जो द्विदिध कर्म हैं, तथा तिन कर्मोंके जो सुख दुःख रूप फल
 हैं, और तिन सुख दुःखों के जो संस्कार हैं तिन सबसे जो

श्री. वा.

॥२८॥

वर्जित सबसे उत्कृष्ट है, तिसका नाम ईश्वर है, याते सो ईश्वर एक स्वतंत्र सर्वज्ञ नित्य मुक्त देव है, और ब्रह्मा विष्णु महादेव इन्द्र कश्यप दक्ष आदि जो प्रजापति हैं तिनका भी पति है, और कार्य प्रपंच से परे जो प्रकृति है, तिससे भी परे है। तिस देव को चम्पा नाथ मानता है। इस जगत्में इसका कोई पति और प्रेरणा करने वाला नहि है तिससे कोई प्रत्यक्ष व्यक्तिभी नहि है सोहि सर्व जगत् का कारण है, पांच महाभूत रूप जगत् के कारणों की अधिपति जो प्रकृति है, तिसका भी पति है, इस कारणसे तिसका कोई अन्य जनक और अधिपति नहि है ॥ तिस ईश्वर का नाम ओंकार है। अदृष्ट विग्रह

श्री० वा०

॥२९॥

मनो मय तथा भावना करके ग्राह्य सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् तिसी का नाम है । इस के जप करने से ईश्वर की सन्निधि और प्रसन्नता होवे है । अकार उकार मकार अर्ध मात्रा इस भेद से ओंकार की चार मात्रा हैं, तिनमें जाग्रत् अवस्था विश्व विशट् यह अकारका अर्थ है । स्वप्नावस्था तैजस हिरण्यगर्भ यह तीन उकार के अर्थ हैं, सुषुप्ति अवस्था प्राज्ञ, ईश्वर, यह तीन मकार के अर्थ हैं, तुरिया अवस्था साक्षा ब्रह्म यह तीन अर्धमात्रा का अर्थ है । अर्ध मात्राको आमात्रा ओंकार भी कहते हैं, इसरीति से चार मात्रों का अर्थ चिंतन करके पीछे अकारका उकार में उकारका मकार में तथा मकारका अर्ध मात्रा ओंकार में

यो.वा.

॥३०॥

लघु चिंतन करे, यह ओंकारके अर्थका विधान है, यावत् चार वेदों में जप सूक्त ऋचा यजु एकाक्षरादिक साम हैं ॥ तिन में गायत्री मंत्र उत्तम है गायत्रीसें युक्तभी ब्राह्मणों करके उपासित किया हुआ ओंकार मंत्र उत्तम है । उक्त प्रकार से ओंकारके जप से प्रत्यक्ष चेतन जो अन्तरात्मा है । तिसका साक्षात्कार होता है । ओंकारहि पर अपर ब्रह्म स्वरूप है । दूसरा विधान यह है कि एक ओंकार ज्योति मय शुद्ध आकाश वत् सर्वज्ञ है । दृढ अनन्त अचल नित्य आदि मध्य अन्तसें वर्जित स्थूल सूक्ष्म अनाकाश अवर्ण अरूप अरस अगन्ध अप्रमेय अनामय आनन्दरूप सर्व जगत्कारण अमूर्त अजन्म अविनाशि अदृश्य

यो० वा०

॥३१॥

ज्ञानि जनोकर दृश्य सर्व के अंतर बाहिर स्थिर सब तर्फ से मुखवाला सब तर्फसे नेत्रवाला सबतर्फसे पादवाला सर्व तर्फ से त्वचावाला सब तरफ से हस्तवाला इनसब विशेषणोंसे उपलक्षित जो सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म है । सो चम्पा नाथ सेठ्य है ध्यान रूप मंथन से परमात्मदेवका साक्षात् कार होवे है । जब ध्येय पदार्थ स्वरूप को प्राप्तहुवा मन अपना अपमान करे है अर्थात् स्वस्वरूपका परित्याग करके ध्येय पदार्थ के आकार में स्थित होवे है सो समाधि कही है । यह देह ब्रह्माण्ड रूप है ऊपर तालु में चन्द्रमा आठ कला स्थित सो चन्द्र रात्रि दिवस अधो मुख होके अमृत की वर्षा करता है । वह अमृत दोभाग

यो०वा०

॥३२॥

होजाताहै सो देह के रक्षणार्थ इडा जो वामनाडी है । उस के रन्ध्रसे सकल शरीरमें हो कर पोषण करताहै इडा की स्थिति कम भागमें है और शुद्ध मेरु पर चन्द्रमा आनंद पूर्वक अपने मण्डल से इडा के रन्ध्र भाग से देहीका पोषण करताहै । मेरु डण्ड के नीचे वारां कला संयुक्त सूर्य स्थित है । दक्षिण पथ पिंगला नाडी द्वारा प्रजापति स्वरूपकी गति ऊपर को है सूर्य अमृत धातु को अपने किरण शक्ति से ग्रस कर जाताहै और वायु मण्डलके साथ शरीरमें भ्रमण करताहै । गुदासे दो अंगुल ऊपर मेढूसे दो अंगुल नीचे मध्यमें चार अंगुल विस्तार आ. धार पद्महै । उसकी डण्डीमें छे योनिहैं । वह योनि योगीश्वरोंको

यो. वा.

॥२३॥

ज्ञात है, उसी स्थान में कुंडलिनी शक्ति साढ़े तीन आरत से ठेकी
 जिसकी प्रभा है, विजली सदृश सुषुम्णा के मार्ग में स्थित है और
 नाडीमूलाधार में उठ के जिह्वा नेत्रपाद का अंगुष्ठकर्ण कुक्षि कच्छ
 हस्तांगुष्ठ पायु उपस्थ सर्वांगों में इनका अन्तर्गत भया है, अर्थात्
 मूलाधार से उत्पन्न होकर अपने २ स्थान में जाकर निवृत्त
 हो गई है, द्वादश कला से युक्त सूर्य मण्डल के मध्य में प्रज्व
 लित अग्नि वस्ति देश में अन्नका पाचन करती है, वह वैश्वान
 र अग्नि है। वह वैश्वानर आयु बल पुष्टता शरीर में कांति देने
 वाली है इस वैश्वानर अग्निको गुरुकी शिक्षा पूर्वक प्रज्वलित
 कर नित्य अन्नका होम करे योग वेत्ता गुरुके उपदेश कर उपद्रव

यो. बा.

॥१४॥

रहित स्वच्छ अल्प आहारहो ऐसे गुफा में पद्मासन बांध कर योगी प्राणायाम करे। दाहने हाथ के अंगूठा से पिंगला को रोक रखे इडासे वायु पूरक करे। यथा शक्ति वायु रोके फेर पिंगला से रेचक करे, फेर पिंगला से पूरक करे यथा शक्ति कुंभक करे। फेर इडासे सने २ रेचक करे, युक्तिसँ विसकुंभक करे एकाग्र वृत्ति रखे प्रातकाल मध्याह्नकाल सायंकाल अर्धरात्रि इनमें चार बार अभ्यास करे और खाटा रूपा तीक्ष्ण लून कडवा और बहुता भ्रमण प्रातकाल स्नान शरीरमें तेल लगाना चोरी हिंसा स्त्रीसंग मनुष्यसे ज्यादा प्रेम अग्निसेवन बहुत भोजन योगी त्यागदे पथ्ययह है कि घृत दूध मधु तांबूल कर्पूर सुगंधी

श्री० वा०

॥३५॥

सूक्ष्म वस्त्र चूर्ण मधुर वचन सूक्ष्म रन्ध्र के स्थान में रहना योग
शास्त्र श्रवण वैराग्य धैर्य क्षमा तप शौच लज्जा गुरु सेवा योगी
करे, जब सूर्य नाडी पिंगला चले तब योगी भोजन करे, और
चन्द्रनाडी इडा चले तो योगी शयन करे तुरत भोजन करके
या क्षुधित होकर योगाभ्यास न करे इस रीतिसे योगीका प्राणा
याम तीन घड़ी तक स्थिरहोगा तो इसकी इच्छा सिद्धि होगी
प्राण अपान नादविन्द जीवात्मा परमात्मा इनका एक भिद्यट
नाको घटावे स्थान कहते हैं ॥



यो. वा.

॥ ३६ ॥

दूसरीविधि ॥

जिह्वा को तालु में स्थिर करके जेकर प्राण वायु को पान करे तोभी सर्व रोग नाश होजायेगा । योगी प्राण अपान अधरको काक चोंचके समान लम्बा करके वायु पान करे तो मुक्ति लाभ है । योगी नित्य रससहित वायु पानकरे तो भ्रम दूर होगा योगी जिह्वाको ऊपरकरके चन्द्रमासे विगलित सुधारसको पान करता है । जो योगी राज दन्तको नीचे के दन्त से दबा कर उसके रन्ध्र द्वारा वायु पान करके कुण्डली देवीका ध्यान करे तो सिद्ध है । बुद्धि वान योगी दांत से दन्तको पीडित कर धीरे २ वायु पान कर मृत्यु जीत लेगा यह साधन छे मास तक करे ॥

योग चार प्रकारका है ।

बो० वा०

॥३७॥

मंत्र योग हठ योग लय योग राज योग साधक भी चार प्रकारके हैं । मृदु साधक मध्य साधक अधि मात्र साधक अधि मात्र तम साधक मृदु साधक मन्द उत्साही झूठ चित्त व्याधिरस्त गुरु निन्दक लोभी स्त्रीवश पापबुद्धि बहुतभोजन करने वाला चंचल कातर रोगी पराधीन कठोर मन्द वीर्यवाला दुर्बुद्धि इतने लक्षणा युक्त मृदु मनुष्य शरणागत हो तो मंत्रयोगका अधिकारी है । मध्यसाधकलक्षणा सामान्यबुद्धि क्षमावान् पुन्यकांक्षी प्रिय वचनी हर्ष विषादी इस्को मध्यसाधक कहते हैं । हठयोग का अधिकारी है । अथ अधिमात्र स्थिरबुद्धि हो । लय योग में

यो.वा.

॥ ३८ ॥

समर्थहो स्वतन्त्रहो वीर्यवानहो दयावानहो क्षमाशीलहो सत्य
 वादीहो शूरवीरहो समाधियोगमें श्रद्धावालाहो गुरुपूजकहो ऐसे
 को अधिमात्र कहते हैं । यह समाधियोगका अधिकारी है । हठ
 योगभी करसक्ता है । अथ अधिमात्रतम साधक लक्षण । महा
 वीर्यवान उत्साहयुक्त स्वरूपवान शास्त्रज्ञ अभ्यासशील सावधान
 नवीनयौवनसम्पन्न जितेन्द्री निर्भयी पवित्र दानशील शरणागत
 पालक स्थिर चित्त बुद्धि वान् सन्तोषयुक्त क्षमावान् शीलवान्
 धार्मिक सत्यवादी गुरुपूजकजनसंगरहित व्याधिरहित वह पुरुष
 सर्व योगका अधिकारी है । तीन वर्ष में योग सिद्धि होवे ॥

अथ प्रतीक उपासना ॥

यो०वा०

॥१३॥

गहरी धूपमें खाकही अपने नेत्रको देखे रहे, सीसेमें देखने का अभ्यास करे तो आत्मलाभ होगा । सर्वदा प्रतीक उपासना के अभ्यास करने से हृदय काशमें अपना प्रतिविम्ब भान होगा ।

अथ प्राणायाम ॥

दोनों अंगुष्ठ से दोनों कान बंद करे, और दोनों तर्जनी से नेत्र बंद करे, दोनों मध्यमा से दोनों नासिका बंद करे और दो दो अनामिका कनिष्ठिका से मुख बंद करे, इस प्रकार योगी वायु निरोध बारंवार करे चाहे केवल कुंभक करे यांपूर करे चकसहित करेगा तो ज्योति स्वरूप आत्मा का हृदय काशमें भान होगा ॥ और योगी शरीर

यो०वा०

॥४०॥

स्थित परमात्माका नित्य पूजनकरेगा तो ज्ञानकी सात भूमिकी प्राप्ति होवेगी सो ज्ञान भूमि विचारणा तनुमानसा सतत्वोत्पत्ति संसक्त नामिका पदार्थभाविनी, तुर्यगा इन सब के करता वसिष्ठ याज्ञवल्क्य वामदेव मछीन्द्र गोरख नारदादि योगीमुनिहैं

अथासनम् ॥

मुख्य चार हैं सिद्धासन पद्मासन सिंहासन भद्रासन गुदा और लिंगके मध्य वाम पादकी एड़ी योनि स्थान में स्थितकरे दाक्षिणपादकी एड़ी योनि में स्थितकरे और हृदयके ऊपर चारअंगुलि ठोड़ी स्थिरकरे, इन्द्रिनको अचल रखे दृष्टि सें भ्रुकुटिको देखतारहे ये सिद्धासन है, इसके सिद्धासन वज्रासन मुक्तासन

यो० वा०

॥४१॥

गुप्तासन नाम है, वाम ऊरुपर दक्षिणचरण दक्षिण ऊरुपर वाम
 चरण स्थापनकरे दक्षिणहस्त पीठ पीछे करके वाम ऊरु स्थित
 अंगुष्ठ ग्रहण करे, ऐसे हि वामहस्त दक्षिण ऊरुस्थित चरण
 अंगुष्ठ ग्रहणकरे हृदयके समीप ठोडी करे, नासाग्र देखे इसको
 पद्मासन कहते हैं । सिंहासन ॥ वृषणके नीचे सीवनीके दक्षिण
 भाग वामपावकी एडी स्थापनकरे फेर जानुके ऊपर दोनों हाथ
 ओंघे करके अंगुली फला कर मुख फाँड कर जिह्वा बाहिर नि-
 कासे एकाग्र चित्त हो नासिकाग्र देखे, यह सिंहासन है, भद्रासन,
 वृषणके नीचे सीवनी वामभागमें वामपावकी एडीधरे, और सी-
 वनीके दक्षिणभागमें दक्षिणपादकी एडीधरे फेर पीछे आय पाव

यो. वा.

॥ ४२ ॥

तिनमें दोनो भुजाकरके बांधलेवे यह भद्रासन है । अथ यम । अहिं-
 सा सत्य अस्तेय आर्जव क्षमा धैर्य शौच ब्रह्मचर्य मिताहार दीन
 जनों पर दया इस भेदसे दशयम हैं । अथ नियम जप, तप, दान,
 वेदान्तशास्त्र श्रवण आस्तिकता सत्यव्रत ईश्वरपूजन यथा लाभ
 में सन्तोष मति लज्जा, इस भेदसे नियम दश हैं ॥ अथ प्राणायाम
 दूसरी विधियह है उदरगत वायु नासाग्रद्वारा बाहर रेचक करे शरीर
 को वायुसे रहित करदे, शून्य भावसे स्थिर होवे यह रेचक प्राणा-
 याम है । बाह्यस्थित प्राणवायुको मुखसे नासिका द्वारके अभ्यन्तर
 आकर्षण करे । प्राणको नीचेसे उपर गतिका निरोध करना इस्का
 नाम पूरक है । प्रथम रेचक फेर पूरक कर प्राणका निरोधन करके

यो०वा०

॥४३॥

पोछे से रेचक पूरकसे रहितकर प्राण स्तम्भनकरे । इसका नाम
 कुंभक है । न रेचक न पूरक करना किन्तु नासा पुटों से स्थित
 प्राण वायुका एकवारहि सुखपूर्वता ऐंहि निरोधनकरना ॥ इसका
 नाम केवल कुंभकहै, पूरकमे ब्रह्माका ध्यानकरे कुंभकमे विष्णुक
 ध्यानकरे रेचकमें रुद्रका ध्यानकरे वाटकमें निरंजनका ध्यानधरे
 अथप्रत्याहार ॥ शब्द स्पर्शरूप रसगन्धादिक विषयों के सन्मुख
 जो श्रोत्रादि इन्द्रिय समूहका अनादि काल से स्वाभाविकही
 प्रवाहचल रहा है । तिनका सर्वकालमें विषयोंके साथ संसर्गहोरहा है
 तिनमें दोषदृष्टि पूर्वक निवारणकरके चित्तके अनुकूल जो तीन
 इन्द्रियोंका स्थापनकरण है । सोई योगका पंचम अंग प्रत्याहार है

अथधारणा ॥

बो. वां.

॥ ४४ ॥

धारणा देशका परित्याग करके जहां जहां यह अत्यन्त चंचल
मन जाता है ॥ तहांसेही दोष दृष्टि पूर्वक प्रयत्नसे निग्रह करे ॥
बारं बार चित्तको धारणा देशविषे लगानेमें खेदको प्राप्त नहि होना
चाहिये ॥

अथध्यानम् ॥

तिसधारणा देशमेंहि अन्य वृत्तियों करके अमिश्रित जो चित्त
वृत्तिका सदृश प्रवाह है । तिसका नाम ध्यान है । अथसमाधि ॥

यो० वा०

॥ ४५ ॥

जिसकालमें ध्येयवस्तु के स्वरूपका परित्याग करके और सर्व प्रकारके संकल्प विकल्पों से रहित हो करके ध्येय वस्तुके स्वरूपसेहि स्थितहोवेहै। तिसको महात्मा लोग योगका अष्टम अंग समाधि कहतेहैं। धारणा ध्यान समाधि रूप योगके अंगहैं। पूर्वोक्त यमनियमादि संप्रज्ञात समाधिका अन्तरंग मुख्य साधन है। अथ अजपागायत्री ॥ यह अजपागायत्री योगी जनोंको मोक्ष दाताहै। हकार से यह श्वास बाहिर निर्गमन करताहै। सकार से फेर अभ्यन्तर प्रवेश करताहै। इस प्रकार हंस हंस का सदाहि जीव जप करे। सो जब गुरु मुखद्वारा विधि पूर्व क जाननेसे सुषुम्णानाडी से हंस हंस उलटानेसे हंसो हं जब

श्री. वा.

॥ ४६ ॥

होवेहै । इसका नाम अजपा मंत्र होवेहै । सो अष्ट पहरमें एक
 विंशति सहस्र और छे सौ २१६०० हंस मंत्रका जप नित्यं प्रति
 सब प्राणी करतेहैं जानता कोई नहि ॥ एकाग्र चित्त हो करके
 हंस मंत्रका एक कोटि जप करनेसे दश विध नादका अनुभव
 होवेगा । चिंचणी ॥ १ घंटानाद २ शंखनाद ३ तंत्रीनाद ४
 तालनाद ५ वेणुनाद ६ मृदंगनाद ७ भेरीनाद ८ मेघनाद
 ९ नव प्रकार के नादका परि त्याग कर ब्रह्मकी प्राप्ति का
 साधन जो दशम मेघनाद तिसका अभ्यास करे । अथ दशमुद्रा
 महामुद्रा १ महाबंध २ महावेध ३ खेचरी ४ उडियान ५ मूल
 बंध ६ जालन्धर बन्ध ७ विपरीत करणी ८ वज्रौली ९ शक्ति

यो० वा०

१४७॥

चालन १० यह १० मुद्रा हैं । अथ छे क्रिया १ धोती २ वस्ति
 नौली ३ त्राटक ४ नेती ५ कपाल धाति ६ यह छे कर्म हैं ।
 जिस्को कफ पित्तजन्य रोग होवे सो करे अथ योगविज्ञ सिद्धि
 अणिमा १ महिमा २ गरिमा ३ लघिमा ४ प्राप्ति ५ प्राकाश्य ६
 ईशिता ७ वशिता ८ यह अष्ट सिद्धि हैं इनको योगी त्यागदे
 अर्थाचार. महावाक्य- तत्त्वमसि सामवेद प्रज्ञानब्रह्म ऋग्वेद ।
 अहं ब्रह्मास्मि यजुर्वेद अयमात्मा ब्रह्म अथर्वणवेद ॥ इति श्रीम
 हायोगिराजचम्पानाथविरचित सिद्धान्तयोगसारसमाप्तम् ॥

अष्टाङ्गयोगा शुद्धिपत्रम् ॥

॥ १ ॥

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
३	१	निबेद्य	वैतिनिबेद्य	५०	३	उ	कोउ
२५	३	मूर्ति	सुर्ति	५२	३	डारे	करडारे
३०	३	हार	हरि	५४	४	ता	ताकार्यकतां
३२	६	वाले	टाले	५४	५	सुधीरजव	सुधीर
३६	५	सत	सूत	५५	२	म	भूम
४१	५	नी	न	५५	६	ता	या
४२	९	पक्ष	शुद्धपक्ष	५७	८	को	०
४२	९	यासा	भ्यासा	५७	९	चतुर	चक्र
४३	५	धर्म	वडेधर्म	५९	१	मन	मनके

ज्ञानयोगसारा शुद्धिपत्रम् ॥

॥ ४ ॥	पृ०	पं	अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	पं	अशुद्ध	शुद्ध
	७	२	नचि	वीच	२५	१०	श्री	तु
	७	३	ओ	होत	२६	२	अत	अंत
	१०	८	मित	मिट	२६	५	षदैस	वै
	११	५	ज्यौ	हैज्यौ	३४	१०	अन	अने
	११	५	ताय	तोष	३९	१	ह	है
	१३	६	मै	से	३९	८	बि	जो
	१३	७	धू	धूकी	३९	८	चित	चि
	१६	३	यग	योग	४१	४	भाव	भावे
	२१	९	अति	श्रुति	४१	६	गन	ग्रत
	२२	४	पा	या	४१	८	विन	चिन

योगवार्तिका शुद्धिपत्रम् ॥

पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	प०	अशुद्ध	शुद्ध
४१	८	तां	त्यो	३	३	अ	उ
॥ ५ ॥ ४२	१	पार	पारा	२	८	वे	और
४२	२	एक	एके	७	९	कर्म	वाक् हस्त
४२	९	ठार	ठौर				पाद लिंग
४३	१	जान	जानत				गुदा कर्म
४४	७	सर	ह	८	७	न्	न्लोक
४७	२	मन	मनमन	८	८	का	योंका
४७	२	सो	विचारकर	८	८	के	का
		इतिज्ञानसारसमाप्तम्		९	१	र	तार
				९	२	को	के

॥ ६ ॥

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
१०	६	मे	पुटमे	१५	६	करे	करेवा ४
१०	१०	वा	और	१५	९	ल	से
११	५	वे	से	१८	१	ता	तासे
११	७	ई	के	१९	२	रोके	कर
१२	४	म	मे	१९	९	पन	पने
१३	१	के	ले	२१	१	ता	सो
१४	१	तु	श	२१	५	रोकन	रेचक
१५	१	वा	क	२७	६	र	रा
१५	४	आ	पुटआ	३०	१	युक्तभी	उत्तम
१५	५	ल	सि	३०	४	जप	जपकरणे

॥ ७ ॥

पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध	पृ०	पं०	अशुद्ध	शुद्ध
३२	१०	छे	त्रिकोण	३९	१	मखाकेही	खडाहोके
३३	१०	है	है	३९	४	मे	मे
३३	२	ली	लीके	४७	५	है	है
३३	८	म	मे				
३४	६	रत्त	रत्ति				
३५	८	नाघटावे	नाहोतीहै	॥ इति योगवार्त्तिकाशुद्धिपत्रं			
		स्थानकह		समाप्तं निधिपतिरुतम्			
		तेहैं					
३८	६	न्ही	न्ध्रयी				
३९	१	क	को				

४२४२९

इति अष्टाङ्गयोग, ज्ञानयोगसार व योगसिद्धांत
सार समाप्तम् ॥

बिलाकीमत

{ पुस्तक मिलने का ठिकाना
लाला हंसराज सरिस्तेदार अदालत सदर
जम्बू

